4. आधुनिक काल

(सन् 1843 ई० से अब तक)

भारतेन्दु–युग अथवा पुनर्जागरण–काल का उदय हिंदी–कविता के लिए नवीन जागरण के सन्देशवाहक युग के रूप में हुआ था, किन्तु इसके सीमांकन के सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र (1850–1885) के रचना–काल को दृष्टि में रखकर संवत् 1925 से 1950 की अवधि को नई धारा अथवा प्रथम उत्थान की संज्ञा दी है और इस काल को हरिश्चन्द्र तथा उनके सहयोगी लेखकों के कृतित्व से समृद्ध माना है। किन्तु उनके द्वारा निर्धारित कालावधि से कुछ अन्य लेखकों का वैमत्य है। यह उल्लेखनीय है कि भारतेन्दु द्वारा सम्पादित मासिक पत्रिका 'कविवचनसुधा' का प्रकाशन 1868 ई. में आरंभ हुआ था, अतः भारतेन्दु–युग का उदय 1868 ई. से मानना उचित है। इसी तर्क का अनुकरण करते हुए 'सरस्वती' के प्रकाशन–वर्ष (1900ई.) को भारतेन्दु–युग की परिसमाप्ति का सूचक माना जा सकता है।

भारतेन्दु युग में जन–चेतना पुनर्जागरण की भावना से अनुप्राणित थी; फलस्वरूप सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक क्षेत्रों में न केवल सक्रियता थी, अपितु इन सबमें गहन अन्तःसंबंध विद्यमान था। भारतेन्दुयुगीन कवि–कर्तृत्व पर इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक था। इसकी परिणति विषय–चयन में व्यापकता और विविधता के रूप में हुई। मातृभूमि–प्रेम, स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार, गोरक्षा, बालविवाह–निषेध, शिक्षा–प्रसार का महत्त्व, मद्य–निषेध, भ्रूण हत्या की निन्दा आदि विषयों को कविगण अधिकाधिक अपनाने लगे थे। राष्ट्रीय भावना का उदय भी इस काल की अनन्य विशेषता है। ब्रह्मसमाज, प्रार्थना–समाज, आर्य–समाज, रामकृष्ण परमहंस और विवेकानन्द के विचारों तथा थियॉसॉफिकल सोसाइटी के सिद्धान्तों का प्रभाव भी जन–जीवन पर पड़ रहा था। आर्थिक, औद्योगिक और धार्मिक क्षेत्रों में पुनर्जागरण की प्रक्रिया आरम्भ होने लगी थी। पाश्चात्य शिक्षा–प्रणाली ने शैक्षिक क्षेत्र में भी वैयक्तिक स्वतन्त्रता की प्रेरणा प्रदान की। अंग्रेजी का प्रचार–प्रसार यद्यपि जनता से सम्पर्क–साधन और प्रशासकीय आवश्यकताओं के लिए किया जा रहा था, पर अंग्रेज़ी–साहित्य के अध्ययन ने अन्य देशों के साथ तुलना का अवसर भी प्रदान किया और इस तरह राष्ट्रीय भावना के विकास के लिए उचित वातावरण बन सका। मुद्रण–यंत्रों के विस्तार और समाचार पत्रों के प्रकाशन ने भी जन–जागरण में योगदान दिया। परिणामस्वरूप तत्कालीन साहित्य–चेतना मध्यकालीन रचना–प्रवृत्तियों तक ही सीमित न रहकर नवीन दिशाओं की ओर उन्मुख होने लगी।

भारतेन्दु युग के प्रमुख कवि एवं रचनाएँ

इस युग में शताधिक कवियों ने विविध प्रवृत्तियों के अन्तर्गत काव्य–रचना की है, किन्तु उनमें भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', प्रतापनारायण मिश्र, जगन्मोहनसिंह, अम्बिकादत्त व्यास और राधाकृष्णदास ही प्रमुख रूप से उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त श्रीधर पाठक (1859–1928), बालमुकुन्द गुप्त (1865–1907) और हरिऔध (1865–1945) की कविताओं का प्रकाशन भी इस युग में आरम्भ हो गया था।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र –कविवर हरिश्चन्द्र (1850–1885) इतिहास–प्रसिद्ध सेठ अमीचन्द की वंश–परंपरा में उत्पन्न हुए थे। उनके पिता बाबू गोपालचन्द्र 'गिरिधरदास' भी अपने समय के प्रसिद्ध कवि थे। हरिश्चन्द्र ने बाल्यकाल में अपनी काव्य प्रतिभा का लोहा मनवा लिया था। उस समय के साहित्यकारों ने उन्हें 'भारतेन्दु' की उपाधि से सम्मानित किया। कवि होने के साथ भारतेन्दु पत्रकार भी थे – 'कविवचनसुधा' और 'हरिश्चन्द्र चन्द्रिका' पत्रिका का भी उन्होंने सम्पादन किया। उनकी काव्य–कृतियों की संख्या 70 है, जिनमें 'प्रेम–मालिका', 'प्रेम–सरोवर', 'गीत गोविन्दानन्द', 'वर्षा–विनोद', 'विनय–प्रेम–पचासा', 'प्रेम–फुलवारी', 'वेणु–गीति' आदि विशेष उल्लेखनीय है। उन्होंने हिन्दी, ब्रज और उर्दू शैली में भी कविताएँ लिखी हैं। इनकी कविताओं में जहाँ प्राचीन परंपरागत विशेषताएँ मिलती हैं वहीं नवीन काव्यधारा का भी प्रवर्तन किया है। राजभक्त होते हुए भी वे एक सच्चे देशभक्त थे। भारतेन्दु कविता के क्षेत्र में वे नवयुग के अग्रदूत थे।

बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' – भारतेन्दु–मण्डल के कवियों में 'प्रेमघन' (1855–1923) का प्रमुख स्थान है। उनका जन्म उत्तरप्रदेश के जिला मिर्जापुर के एक सम्पन्न ब्राह्मण कुल में हुआ। भारतेन्दु की भाँति उन्होंने भी पद्य और गद्य दोनों में विपुल साहित्य–रचना की है। साप्ताहिक 'नागरी नीरद' और मासिक 'आनन्दकादम्बिनी' के सम्पादन द्वारा उन्होंने तत्कालीन पत्रकारिता को भी नई दिशा दी। 'जीर्ण जनपद', 'आनन्द अरुणोदय', 'हार्दिक हर्षादर्श', 'मयंक–महिमा', 'अलौकिक लीला', 'वर्षा–बिन्दु' आदि उनकी प्रसिद्ध काव्य–कृतियाँ हैं, जो अन्य रचनाओं के साथ 'प्रेमघन–सर्वस्व' के प्रथम भाग में संकलित हैं। इनकी कविताओं में श्रृंगारिकता के साथ–साथ जातीयता, समाज–दशा और देश–प्रेम की भी अभिव्यक्ति हुई है। यद्यपि उन्होंने राजभक्ति संबंधी कविताओं की भी रचना की है, तथापि राष्ट्रीय भावना की नई लहर भी उनकी कविताओं में मिलती है।

प्रतापनारायण मिश्र – 'ब्राह्मण' के संपादक प्रतापनारायण मिश्र (1856–1894) का जन्म बैजेगांव, जिला उन्नाव में हुआ था। वे ज्योतिष का पैतृक व्यवसाय न अपनाकर साहित्य–रचना की ओर प्रवृत्त हुए। कविता, निबंध और नाटक उनके मुख्य रचना–क्षेत्र हैं। 'प्रेमपुष्पावली', 'मन की लहर', 'लोकोक्ति–शतक', 'तृप्यन्ताम्' और 'श्रृंगार विलास' उनकी प्रसिद्ध रचनाएँ हैं। 'प्रताप–लहरी' उनकी प्रतिनिधि कविताओं का संकलन है। इन्होंने प्रेम की तुलना में समसामयिक देश–दशा और राजनीतिक चेतना का वर्णन अधिक मनोयोग से किया है। हास्य–व्यंग्यात्मक कविताओं के क्षेत्र में

मिश्र जी का अग्रणी स्थान है। प्रेमघन की भाँति उन्होंने भी लावणी–शैली में अनेक कविताएँ लिखी हैं।

जगन्मोहनसिंह – ठाकुर जगन्मोहनसिंह (1857–1899) मध्यप्रदेश की विजय–राघवगढ़ रियासत के राजकुमार थे। उन्होंने काशी में संस्कृत और अंग्रेजी की शिक्षा प्राप्त की। श्रृंगार–वर्णन और प्रकृति–सौंदर्य की अवतारणा उनकी मुख्य काव्य–प्रवृत्तियाँ हैं। 'प्रेमसम्पत्तिलता' (1885), 'श्यामालता' (1885), 'श्यामा–सरोजिनी' (1886) और 'देवयानी' (1886), इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं। जगन्मोहनसिंह में काव्य–रचना की स्वाभाविक प्रतिभा थी और वे भावुक मनोवृत्ति के कवि थे। कल्पना–लालित्य, भावुकता, चित्र–शैली और सरस–मधुर ब्रजभाषा उनकी रचनाओं की अन्यतम विशेषताएँ हैं।

अम्बिकादत्त व्यास – काशी–निवासी कविवर दुर्गादत्त व्यास के पुत्र अम्बिकादत्त व्यास (1858–1900) सुकवि थे। वे संस्कृत और हिंदी के अच्छे विद्वान थे और दोनों भाषाओं में साहित्य–रचना करते थे। ये 'पीयूष–प्रवाह' पत्रिका का भी सम्पादन करते थे। 'पावस पचासा' (1886), 'सुकवि सतसई' (1887), और 'हो हो होरी' (1891) इनकी उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। इनकी रचना ललित ब्रजभाषा में हुई है। उन्होंने खड़ी बोली में 'कंस–वध' (अपूर्ण) शीर्षक प्रबंधकाव्य की रचना भी आरम्भ की थी, किन्तु इसके केवल तीन सर्ग ही लिखे जा सके। इन्होंने समस्यापूर्तियाँ भी लिखी हैं। उनकी भारतीय संस्कृति में गहन आस्था थी। उन्होंने सरल और कोमल–कान्त पदावली के प्रयोग को वरीयता दी।

राधाकृष्णदास – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के फुफेरे भाई राधाकृष्णदास (1865–1907) बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। कविता के अतिरिक्त उन्होंने नाटक, उपन्यास और आलोचना के क्षेत्रों में भी उल्लेखनीय साहित्य–रचना की है। उनकी कविताओं में भक्ति, श्रृंगार और समकालीन सामाजिक–राजनीतिक चेतना को विशेष स्थान प्राप्त हुआ है। 'भारत–बारहमासा' और 'देश–दशा' समसामयिक भारत के विषय में उनकी प्रसिद्ध कविताएँ हैं। इनकी कुछ कविताएँ 'राधाकृष्णदास ग्रंथावली' में संकलित हैं। उन्होंने भी खड़ी बोली और ब्रजभाषा में अपनी कविताएँ रची हैं।

अन्य कवि – भारतेन्दु काल के इनके अतिरिक्त अन्य कवियों का योगदान भी स्मरणीय है। इनकी रचनाओं में भक्तिभावना और श्रृंगार–वर्णन की प्रमुखता रही है। इस संदर्भ में नवनीत चतुर्वेदी (1868–1919) का नाम आता है। इनकी प्रसिद्ध कृति 'कुब्जा पचीसी' रीति–पद्धति की सरस रचना है। इनके शिष्यों में जगन्नाथदास 'रत्नाकर' ने आगे चलकर विशेष ख्याति प्राप्त की। गोविन्द गिल्लाभाई ने इस काल में 'श्रृंगार सरोजिनी', 'पावस पयोनिधि', 'राधामुख षोडसी' और 'षड्ऋतु' भक्ति और प्रेम–वर्णन संबंधी रचनाएँ लिखीं। दिवाकर भट्ट कृत 'नखशिख' (1884) और 'नवोढारत्न' (1888) भी रीति–पद्धति की रचनाएँ हैं। रामकृष्ण वर्मा 'बलवीर' ने 'बलवीर पचासा' लिखी। राजेश्वरीप्रसाद सिंह 'प्यारे' का 'प्यारे प्रमोद' भी श्रृंगार परक कविता है। गुलाबसिंह की 'प्रेम सतसई' और राव कृष्णदेवशरण सिंह 'गोप' का 'प्रेम–सन्देसा' भी श्रृंगारपरक कृतियाँ हैं। इस

काल में श्रृंगार के अतिरिक्त अन्य विषयों पर भी कविताएँ लिखी गईं। इनमें राधाचरण गोस्वामी की 'नव भक्तमाल', गोविन्द गिल्लाभाई की 'नीति विनोद' और दुर्गादत्त व्यास के 'अधमोद्धारक शतक' भी प्रसिद्ध है।

भारतेन्दु युग पुरातन और नवीन के सन्धि–स्थल पर स्थित है। इस युग की उपलब्धि यह है कि इसके पूर्व रीतिकाल श्रृंगार की प्रवृत्ति पर बल रहा था, उसके स्थान पर कविगण समाज और राष्ट्र के उद्बोधन देने वाली लोकमंगलकारी दृष्टि की ओर उन्मुख होने लगे, जिसकी पूर्ण परिणति आगे चलकर द्विवेदी–युग में लक्षित हुई।

भारतेन्दु युग का गद्य साहित्य –

भारतेन्दु–युग में अर्थात् उन्नीसवीं शती के अन्तिम चरण में पूरे देश में सांस्कृतिक जागरण की लहर दौड़ चुकी थी। सामन्तीय ढाँचा टूट चुका था। अंग्रेजी शिक्षा के विकास की गति चाहे जितनी धीमी रही हो और उसके उद्देश्य चाहे जितने सीमित रहे हों, उसका व्यापक प्रभाव देश के शिक्षित समाज पर पड़ रहा था। भारत में राष्ट्रीय एवं सामाजिक सोच विकसित हो रही थी। सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनीतिक क्षेत्र में परिवर्तन और सुधार की आवश्यकता थी। भारतेन्दु इसी प्रगतिशील चेतना के प्रतिनिधि थे। उन्होंने अपने साहित्य के माध्यम से ठीक समय पर उचित नेतृत्व प्रदान किया और अपने निबन्धों, नाटकों तथा भाषणों में जागरण का संदेश दिया। उनके सहयोगियों और समर्थकों ने उनके द्वारा प्रशस्त पथ पर चलकर हिंदी की जो सेवा की वह अविस्मरणीय है। भारतेन्दुकालीन साहित्य सांस्कृतिक जागरण का साहित्य है। इस युग में गद्य की लगभग सभी विधाओं नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध, आलोचना आदि सभी का विकास एवं लेखन हुआ।

नाटक

हिंदी नाटकों का आरंभ हरिश्चन्द्र से ही माना जाना चाहिए। इसके पूर्व प्राणचन्द चौहान का 'रामायण महानाटक' (1610), लछिराम का 'करुणाभरण' (1657), नेवाज का 'शकुन्तला' (1680), महाराज विश्वनाथसिंह का 'आनन्द रघुनन्दन' (1700 ई.), रघुराय नागर का 'सभासार' (1700) उदय का 'रामकरुणाकर' एवं 'हनुमान नाटक' (1840) का उल्लेख मिलता है। जो नाटकीय तत्वों की दृष्टि से खरे नहीं उतरते।

इसके पश्चात् भारतेन्दु के पिता गोपालचन्द्र गिरिधरदास ने 'नहुष' (1857) नाटक लिखा किन्तु वह ब्रजभाषा में लिखा गया। गणेश कवि ने 'प्रद्युम्न विजय' नाटक (1863) लिखा जो पद्यबद्ध है तथा संस्कृत नाटक का अनुवाद था। शीतलाप्रसाद त्रिपाठी ने 'जानकी मंगल' (1868) नाटक लिखा इसकी भाषा परिमार्जित खड़ीबोली थी।

इसके बाद भारतेन्दु का उदय हो चुका था। भारतेन्दु अपने युग के श्रेष्ठ नाटककार थे। उन्होंने अनुदित और मौलिक नाटक लिखे। उन्होंने 1. विद्यासुन्दर (1868) लिखा, जो संस्कृत 'चौरपंचाशिका' के बंगला–संस्करण का हिंदी रूपान्तरण था। इसके अतिरिक्त भारतेन्दु ने 2. रत्नावली (1868 संस्कृत से अनुवाद), 3.पाखण्ड विडम्बन (1872 कृष्ण मिश्र के 'प्रबोध–चन्द्रोदय' के

नाटक का अनुवाद), 4.धनंजय विजय (1873 कांचन कवि के संस्कृत–नाटक का अनुवाद), 5. कर्पूरमंजरी (1875 सट्टक, कांचन के संस्कृत–नाटक का अनुवाद), 6.भारत जननी (1877 नाट्यगीत), 7.मुद्राराक्षस (1878 विशाखदत्त के संस्कृत नाटक का अनुवाद), 8.दुर्लभ बन्धु (1873 प्रहसन), 10.सत्य हरिश्चन्द्र (1875), 11.श्री चन्द्रावली (1876 नाटिका), 12. विषस्य विषमौषधम् (1876 भाण), 13.भारत दुर्दशा (1880 नाट्यरासक), 14.नीलादेवी (1881 गीतिरूपक), 15.अंधेर नगरी (1881 प्रहसन), 16.सती प्रताप (1883 गीतिरूपक), 17.प्रेमजोगिनी (1875, नाटिका) नाटक लिखे।

इस युग में पौराणिक, ऐतिहासिक, रोमानी एवं समसामयिक समस्याओं को लेकर नाटक लिखे गए। ऐतिहासिक नाटकों में भारतेन्दु का 'नीलदेवी', श्रीनिवासदास का 'संयोगिता स्वयंवर', राधाचरण गोस्वामी का 'अमर सिंह राठौर' तथा राधाकृष्णदास का 'महाराणा प्रताप' उल्लेखनीय है। रोमानी नाटकों में श्रीनिवासदास का 'रणधीर प्रेममोहिनी' और 'तप्ता संवरण', किशोरीलाल गोस्वामी का 'प्रणयिनी परिणय' और 'मयंक मंजरी', शालिग्राम शुक्ल का 'लावण्यवती सुदर्शन' उल्लेखनीय है। 'रणधीर प्रेममोहिनी' को विशेष प्रसिद्धि प्राप्त हुई। समसामयिक समस्याओं पर लिखे नाटकों में भारतेन्दु का 'भारत–दुर्दशा', बालकृष्ण भट्ट का 'नई रोशनी का विष', खड़गबहादुर मल्ल का 'भारत आरत', अम्बिकादत्त व्यास का 'भारत–सौभाग्य' राधाकृष्णदास का 'दुःखिनी बाला', गोपालराम गहमरी का 'देश–दशा' उल्लेखनीय है।

उपन्यास

इस युग में उपन्यास भी खूब लिखे गए एवं सभी विषयों को लेकर लिखे गए। अंग्रेजी ढंग का पहला मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवासदास का 'परीक्षागुरु' (1892) माना जाता है। इसके पूर्व श्रद्धाराम फुल्लौरी ने 'भाग्यवती' (1877) शीर्षक लघु सामाजिक उपन्यास लिखा था। इस युग के उपन्यासकारों में लाली श्रीनिवासदास (1851–1887), किशोरीलाल गोस्वामी (1865–1932), बालकृष्ण भट्ट (1844–1914), ठाकुर जगन्मोहन सिंह (1857–1899), राधाकृष्णदास (1865–1907), लज्जाराम शर्मा (1863–1931), देवकीनन्दन खत्री (1861–1913) और गोपालराम गहमरी (1866–1946) प्रमुख हैं।

भारतेन्दु काल में सामाजिक, ऐतिहासिक, तिलस्मी–ऐयारी, जासूसी तथा रोमानी उपन्यासों की रचना खूब हुई। सामाजिक उपन्यासों में 'भाग्यवती' और 'परीक्षागुरु' के अतिरिक्त बालकृष्ण भट्ट का 'रहस्यकथा', 'नूतन ब्रह्मचारी' और 'सौ अजान एक सुजान', राधाकृष्णदास का 'निस्सहाय हिन्दू', लज्जाराम शर्मा का 'धूर्त रसिकलाल' और 'स्वतंत्र रमा और परतन्त्र लक्ष्मी', तथा किशोरीलाल गोस्वामी का 'त्रिवेणी वा सौभाग्यश्रणी' विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

तिलस्मी–ऐयारी के उपन्यासों में देवकीनन्दन खत्री का 'चन्द्रकान्ता', 'चन्द्रकान्ता सन्तति', 'नरेन्द्र मोहिनी', 'वीरेन्द्र वीर' और 'कुसुमकुमारी' तथा हरेकृष्ण जौहर का 'कुसुमलता' प्रसिद्ध हुए। इस युग के सर्वप्रधान उपन्यास लेखक किशोरीलाल गोस्वामी माने गए हैं। इस युग में बंगला और अंग्रेजी के उपन्यासों का अनुवाद भी बहुत हुआ।

कहानी

इस युग में आधुनिक कलात्मक कहानी का आरंभ नहीं हुआ था। कहानियों के नाम पर कुछ प्रकाशित संग्रह प्राप्त हैं, जैसे – मुंशी नवलकिशोर द्वारा सम्पादित 'मनोहर कहानी' (1880) में संकलित एक सौ कहानियाँ, अम्बिकादत्त व्यास का 'कथा कुसुम कलिका' (1888), राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द का 'वामा मनोरंजन' (1886) और चण्डीप्रसाद सिंह का 'हास्य रतन' (1886) आदि। वस्तुतः ये लोक–प्रचलित तथा इतिहास–पुराण–कथित शिक्षा नीति या हास्य–प्रधान कथाएँ हैं जिन्हें तत्कालीन लेखकों ने स्वयं लिखकर या लिखवाकर सम्पादन करके प्रकाशित करा दिया।

निबन्ध

भारतेन्दु युग में सबसे अधिक सफलता निबंध लेखन में प्राप्त हुई। निबंधों का संबंध पत्र–पत्रिकाओं से सीधे जुड़ा हुआ था। इस युग में राजनीति, समाज–सुधार, धर्म–अध्यात्म, आर्थिक दुर्दशा, अतीत का गौरव, महापुरुषों की जीवनियाँ आदि विषयों पर निबंध लिखे गए। इस युग के लेखकों ने पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से निबंध विधा को खूब समृद्ध किया।

बालकृष्ण भट्ट और प्रतापनारायण मिश्र ने इस विधा को और भी विकसित और समृद्ध किया। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने तो इन्हें हिंदी का 'स्टील' और 'एडीसन' कहा है। भारतेन्दु युग के अन्य प्रमुख निबंधकार थे – भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, प्रतापनाराण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन', लाला श्रीनिवासदास, राधाचरण गोस्वामी, काशीनाथ खत्री आदि। इन सभी निबंधकारों का संबंधी किसी न किसी पत्र–पत्रिका से था। भारतेन्दु ने 'हरिश्चन्द्र मैगजीन', प्रतापनारायण मिश्र ने 'ब्राह्मण', बालकृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी प्रदीप', बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने 'आनन्दकादम्बनी', श्रीनिवासदास ने 'सदादर्श' और राधाचरण गोस्वामी ने 'भारतेन्दु' का सम्पादन किया था। बालकृष्ण भट्ट इस युग के सर्वाधिक समर्थ निबंधकार थे। उन्होंने सामयिक समस्याओं पर जमकर लिखा। 'बालविवाह', 'स्त्रियाँ और उनकी शिक्षा', 'राजा और प्रजा', 'कृषकों की दुरावस्था', 'अंग्रेजी शिक्षा और प्रकाश', 'हमारे नये सुशिक्षितों में परिवर्तन', 'देश–सेवा–महत्त्व', 'महिला–स्वातंत्र्य' आदि निबंध इसी प्रकार के हैं। इनके अतिरिक्त उन्होंने मनोभावों से संबंधित निबंध भी लिखे। इस युग में विचारात्मक, भावात्मक, वर्णनात्मक, विवरणात्मक, कथात्मक, इतिवृत्तात्मक, अनुसन्धानात्मक एवं भाषण आदि सभी शैलियों के निबंध लिखे गए।

आलोचना

भारतेन्दु युग में हिंदी आलोचना का आरंभ पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से हुआ। 'हिंदी प्रदीप' एक ऐसा पत्र था जो गम्भीर आलोचनाएँ प्रकाशित करता था। वस्तुतः भारतेन्दु युग में आधुनिक आलोचना का रूप यदि कहीं बीज–रूप में सुरक्षित है तो वह पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित पुस्तक–समीक्षाओं में ही है। इस क्रम में सबसे पहला उल्लेखनीय नाम बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' का है। उन्होंने श्रीनिवासदास कृत 'संयोगिता स्वयंवर' और गदाधर सिंह कृत 'बंग विजेता' के अनुवादों की विस्तृत आलोचना 'आनन्दकादम्बिनी' में की थी। इसके बाद बालकृष्ण भट्ट और बालमुकुन्द गुप्त ने इस परंपरा को आगे बढ़ाया। भट्ट जी की 'नीलदेवी', 'परीक्षा गुरु', 'संयोगिता स्वयंवर' और 'एकान्तवासी योगी' संबंधी आलोचनाएँ तत्कालीन समीक्षा–साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान

रखती है। बालमुकुन्द गुप्त द्वारा लिखित आलोचनाएँ भी इसी परंपरा को आगे बढ़ाने वाली हैं, किन्तु उनका कृतित्व बहुत–कुछ द्विवेदी–युग की सीमा में जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिंदी गद्य साहित्य के विकास क्रम में भारतेन्दु युग के गद्य साहित्यकारों का महत्त्व एवं योगदान असाधारण है। इसी युग में हिंदी प्रदेश में आधुनिक जीवन चेतना का उन्मेष हुआ। हिंदी गद्य की प्रायः सभी विधाओं का सूत्रपात इसी युग में हुआ। भारतेन्दु काल का साहित्य व्यापक जागरण का संदेश लेकर आया और भाषा के स्वरूप विकास में भी अभूतपूर्व प्रगति हुई।

द्विवेदी युग –

इस युग को जागरण–सुधार–काल भी कहते हैं। इस काल के पथ प्रदर्शक आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के नाम पर इस युग को 'द्विवेदी युग' कहा गया। 1858 के विद्रोह के पश्चात् महारानी विक्टोरिया के सहृदयतापूर्ण घोषणा–पत्र ने भारतीयों में कुछ आशा जगाई थी किन्तु बाद में वे आशाएँ खरी नहीं उतरीं। फलस्वरूप जनता में असंतोष और क्षोभ की आग भड़कती चली गई। आर्थिक दृष्टि से भी अंग्रेजों की नीति भारत के लिए अहितकर थी। यहाँ से कच्चा माल बाहर जाता था और वहाँ के बने माल की खपत भारत में होती थी। देश का धन निरन्तर बाहर जाने से भारत निर्धन हो गया। इस कारण असंतोष फैला। पूरे भारत में आंदोलन होने लगे। देश को गोपालचन्द्र गोखले तथा बालगंगाधर तिलक जैसे नेता मिले। भारतेन्दु युग में जहाँ भारत की दुर्दशा का दुःख प्रकट करके चुप रह गए वहाँ द्विवेदीकालीन कवि–मनीषियों ने देश की दुर्दशा के चित्रण के साथ–साथ देशवासियों को स्वतंत्रता प्राप्ति की प्रेरणा भी दी।

काव्यधारा

यद्यपि भारतेन्दु काल में ब्रजभाषा के अतिरिक्त खड़ी बोली में भी रचनाएँ की जाने लगी थीं किंतु उसे काव्योपयुक्त नहीं समझा गया। सुयोग से इसी समय जनता की रुचि एवं आकांक्षाओं के पारखी तथा साहित्य के दिशा–निदेशक आचार्य के रूप में पंडित महावीर प्रसाद द्विवेदी का प्रादुर्भाव हुआ। जून 1900 की 'सरस्वती' में प्रकाशित 'हे कविते' शीर्षक अपनी कविता में उन्होंने जनरुचि का प्रतिनिधित्व करते हुए ही ब्रजभाषा के प्रयोग पर क्षोभ प्रकट किया था। सन् 1903 में आचार्य द्विवेदी 'सरस्वती' के सम्पादक बने। उन्होंने नायिकाभेद को छोड़कर विविध विषयों पर कविताएँ लिखने के लिए कवियों को प्रेरित किया। उनकी प्रेरणा और प्रोत्साहन के परिणामस्वरूप कई कवि आगे आए जिनमें मैथिलीशरण गुप्त, गोपालशरण सिंह, गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही', लोचनप्रसाद पाण्डेय प्रमुख हैं। कुछ कवियों ने भी अपना रास्ता बदला जो परंपरागत ब्रज में अपनी कविताएँ लिख रहे थे, जिनमें अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', नाथूराम शर्मा 'शंकर' तथा राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' प्रमुख हैं। इस युग की कविता में विषय की दृष्टि से विविधता और नवीनता आई। द्विवेदी जी के प्रयत्नों से खड़ीबोली काव्य की मुख्य भाषा बन गई। द्विवेदी जी भाषा की शुद्धि एवं वर्तनी की एकरूपता के प्रबल समर्थक थे। अतएव उन्होंने काव्य–भाषा का व्याकरण की दृष्टि से

परिमार्जन किया। आचार्य द्विवेदी जी ने समस्यापूर्ति को छोड़ने तथा स्वतंत्र विषयों पर कविता लिखने का भी परामर्श दिया।

द्विवेदीकालीन कविता में प्रमुख रूप से राष्ट्रीयता की भावना, सामान्य भावना, नीति और आदर्श, वर्ण्य विषय का क्षेत्र–विस्तार, हास्य–व्यंग्यपूर्ण काव्य, सभी काव्य रूपों का प्रयोग, भाषा–परिवर्तन, छन्द–वैविध्य आदि बिन्दु उभर कर सामने आए हैं।

प्रमुख कवि

नाथूराम शर्मा 'शंकर' (1859–1932) – इनका जन्म हरदुआगंज, जिला अलीगढ़ में हुआ था। ये हिंदी, उर्दू, फारसी तथा संस्कृत के अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने 'सरस्वती' के मुख्य कवियों में स्थान पाया। देश–प्रेम, स्वदेशी–प्रयोग, समाज–सुधार, हिंदी–अनुराग, तथा विधवाओं तथा अछूतोद्धार इनकी कविताओं के मुख्य विषय रहे। सामाजिक कुरीतियों, आडम्बरों, अंधविश्वासों, बाल–विवाह आदि पर इन्होंने बड़े तीखे व्यंग्य किए। 'अनुरागरत्न', 'शंकर–सरोज', 'गर्भरण्डा–रहस्य' तथा 'शंकर–सर्वस्व' इनके प्रमुख काव्य ग्रंथ हैं।

श्रीधर पाठक (1859–1927) –इनका जन्म आगरा जिले के जोंधरी गाँव में हुआ था। खड़ीबोली के तो ये प्रथम समर्थ कवि भी कहे जा सकते हैं। इन्होंने 'सरस्वती' से पूर्व ही खड़ीबोली में कविताएँ लिखकर अपनी स्वच्छन्द वृत्ति का परिचय दिया था। देश–प्रेम, समाजसुधार तथा प्रकृति चित्रण इनकी कविता के मुख्य विषय रहे। इनका सर्वाधिक सफलता प्रकृति चित्रण में मिली। इन्होंने रूढ़ि का परित्याग कर प्रकृति का स्वतंत्र रूप में मनोहारी चित्रण किया है। पाठक जी कुशल अनुवादक भी थे। इन्होंने कालिदास की 'ऋतुसंहार' और गोल्डस्मिथ की 'हरमिट', 'डेजर्टेड विलेज' तथा 'द ट्रैवेलर' का 'एकान्तवासी योगी', 'ऊजड़ ग्राम' और 'श्रान्त पथिक' शीर्षक से काव्यानुवाद किया। इनकी मौलिक कृतियों में 'वनाष्टक', 'कश्मीर सुषमा', 'देहरादून' और 'भारत गीत' विशेष उल्लेखनीय हैं।

महावीर प्रसाद द्विवेदी (1864–1938) – इनका जन्म जिला रायबरेली के दौलतपुर नामक ग्राम में हुआ था। इन्होंने रेलवे में नौकरी की किन्तु अधिकारियों के साथ कहासुनी होने पर नौकरी से त्यागपत्र दे दिया। सन् 1903 में ये 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक बने और 1920 तक बड़े परिश्रम और लगन से यह कार्य करते रहे। 'सरस्वती' के संपादक के रूप में इन्होंने हिंदी भाषा और साहित्य के उत्थान के लिए जो कार्य किया, वह चिरस्मरणीय रहेगा। ये कवि, आलोचक, निबंधकार, अनुवादक तथा सम्पादकाचार्य थे। इनके मौलिक गद्य–पद्य ग्रंथों की संख्या लगभग 80 है। गद्य लेखन के क्षेत्र में इन्हें विशेष सफलता मिली। 'काव्य–मंजूषा', 'सुमन', 'कान्यकुब्ज–अबला–विलाप'(मौलिक पद्य), 'गंगालहरी', 'ऋतु–तरंगिणी', 'कुमारसम्भवसार' (अनुदित) द्विवेदी जी की उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। इनकी कविता सहज, सरल और प्रायः उद्देश्यपूर्ण होती थी।

अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' (1865–1947)– हरिऔध जी द्विवेदी युग के प्रख्यात कवि होने के साथ–साथ उपन्यासकार, आलोचक एवं इतिहासकार भी थे। इनका जन्म निजामाबाद, जिला आज़मगढ़ में हुआ था। 1923 में सरकारी नौकरी से अवकाश ग्रहण कर शेष जीवन

साहित्य–सेवा को समर्पित कर दिया। इनका काव्य ग्रंथों में 'प्रियप्रवास'(1914), 'पद्यप्रसून' (1924), 'चुभते चौपदे', चोखे चौपदे' (1932), 'बोलचाल', 'रसकलश' तथा 'वैदेही–वनवास' (1940) प्रसिद्ध हैं। इनमें से 'प्रियप्रवास' खड़ीबोली में लिखा गया प्रथम महाकाव्य है। 'प्रियप्रवास' पर इन्हें हिंदी का सर्वोत्तम पुरस्कार 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' प्रदान किया गया।

राय देवीप्रसाद 'पूर्ण' (1868–1914) – इनका जन्म जबलपुर में हुआ था। इन्होंने देशभक्ति आदि नवीन विषयों पर खड़ीबोली में काव्य–रचना की। इन्होंने कालीदास की 'मेघदूत' का 'धाराधरधावन' नाम से अनुवाद किया। 'मृत्यंजय' (1904), 'राम–रावण–विरोध' (1906), तथा 'वसन्त–वियोग' (1912) इनकी उल्लेखनीय काव्य–कृतियाँ हैं।

गयाप्रसाद शुक्ल 'सनेही' (1883–1972) – इनका जन्म उन्नाव जिले के कहड़ा ग्राम में हुआ था। ये खड़ीबोली में कवित्त और सवैया छन्दों का प्रयोग करने में सिद्धहस्त थे। इन्होंने अनेक प्रयाण–गीत और बलिदान–गीत लिखे। पराधीन देश की दुर्दशा, आर्थिक विषमता, अस्पृश्यता आदि विषयों पर भी इन्होंने मार्मिक एवं प्रभावी कविताएँ लिखीं। ये 'सुकवि' नामक काव्य–पत्रिका के संपादक भी रहे। 'कृषक–क्रन्दन', 'प्रेम–पचीसी', 'राष्ट्रीय वीणा', 'त्रिशूल तरंग', 'करुणा–कादम्बिनी' आदि इनकी मुख्य काव्य–रचनाएँ हैं।

मैथिलीशरण गुप्त (1886–1964) – इनका जन्म चिरगांव (झांसी) में हुआ था। ये द्विवेदी काल के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि थे। द्विवेदी के स्नेह और प्रोत्साहन से इनकी काव्य–कला में निखार आया। इनकी प्रथम पुस्तक 'रंग में भंग' (1909) है किन्तु इनकी ख्याति का मूलाधार 'भारत–भारती' (1912) है। उत्तर–भारत में राष्ट्रीयता के प्रचार और प्रसार में 'भारत–भारती' के योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकता। 'भारत–भारती' ने हिंदी–मनीषियों में जाति और देश के प्रति गर्व और गौरव की भावनाएँ उत्पन्न की और तभी से ये राष्ट्रकवि के रूप में विख्यात हुए। ये रामभक्त कवि भी थे। 'मानस' के पश्चात् हिंदी में रामकाव्य का दूसरा स्तम्भ इनके द्वारा रचित 'साकेत' ही है। खड़ीबोली के स्वरूप–निर्धारण और विकास में इनका अन्यतम योगदान है। गुप्त जी के प्रमुख काव्य ग्रंथ हैं – 'जयद्रथ वध' (1910), भारत–भारती (1912), 'पंचवटी' (1925), 'झंकार' (1929), 'साकेत' (1931), 'यशोधरा' (1932), 'द्वापर' (1936), 'जयभारत' (1952), 'विष्णुप्रिया' (1957) आदि। 'प्लासी का युद्ध', 'मेघनाद–वध', 'वृत्र–संहार', आदि इनके अनूदित काव्य हैं।

रामनरेश त्रिपाठी (1889–1962) – इनका जन्म जिला जौनपुर के अन्तर्गत कोहरीपुर ग्राम में हुआ। ये 'सरस्वती' पत्रिका के प्रभावस्वरूप खड़ीबोली की ओर प्रवृत्त हुए। इनके चार ग्रंथ प्रकाशित हुए – 'मिलन' (1917), 'पथिक' (1920), 'मानसी' (1927), 'स्वप्न' (1929)। इनमें से 'मानसी' इनकी फुटकर कविताओं का संग्रह है जो मुख्यतः देशप्रेम, प्रकृति–चित्रण और नीति–निरूपण से सम्बद्ध है। 'मिलन', 'पथिक' और 'स्वप्न' काल्पनिक कथाश्रित प्रेमाख्यानक खण्डकाव्य हैं।

इनके अतिरिक्त बालमुकुन्द गुप्त, भगवानदीन, अमीर अली 'मीर', कामताप्रसाद गुरु, गिरिधर शर्मा 'नवरत्न', रूपनारायण पाण्डेय, लोचनप्रसाद पाण्डेय, गोपाल शरण सिंह, मुकुटधर पाण्डेय भी इस युग के उल्लेखनीय कवि हैं।

द्विवेदीयुगीन काव्य सांस्कृतिक पुनरुत्थान, उदार राष्ट्रीयता, जागरण–सुधार एवं उच्चादर्शों का काव्य है। इस युग में सभी काव्य–रूपों का सफल प्रयोग हुआ है। खड़ीबोली के स्वरूप–निर्धारण और विकास का श्रेय भी इसी कालखण्ड को जाता है।

गद्य साहित्य

इस युग में गद्य साहित्य भी प्रचुर मात्रा में लिखा गया। गद्य की लगभग सभी विधाओं का इस काल में विकास हुआ। साहित्यकारों के मन पर राष्ट्र की प्रत्येक महत्त्वपूर्ण घटना का प्रभाव पड़ा और उनकी रचनाओं में राष्ट्रीय चेतना प्रतिबिम्बित हुई। इस युग में साहित्य की प्रत्येक विधा में व्यापक राष्ट्रीय जागरण एवं सुधार की भावना विद्यमान है।

नाट्य साहित्य

द्विवेदी युग में नाटक अपेक्षाकृत कम ही लिखे गए। इस काल के नाटकों को छः वर्गों में विभक्त किया जा सकता है – (क) पौराणिक नाटक, (ख) ऐतिहासिक नाटक, (ग) सामयिक उपादानों पर रचित नाटक, (घ) रोमांचकारी नाटक (ङ) प्रहसन और (च) अनूदित नाटक।

राम और कृष्ण से संबंधित पौराणिक नाटकों में राधाचरण गोस्वामी का 'श्रीदामा' (1904), शिवनंदन सहाय का 'सुदामा' (1907) और नारायण मिश्र का 'कंसवध' (1910), रामनारायण मिश्र का 'जनक बाड़ा' (1906), गंगाप्रसाद का 'रामाभिषेक' (1910), गिरधारीलाल का 'राम–वनयात्रा' (1910), नारायणसहाय का 'रामलीला' (1911), रामगुलामलाल का 'धनुषयज्ञ लीला' (1912) उल्लेखनीय है। अन्य पौराणिक नाटकों में महावीर सिंह का 'नल–दमयन्ती' (1905), बालकृष्ण भट्ट का 'वेणुसंहार' (1909), लक्ष्मीप्रसाद का 'उर्वशी' (1910), जयशंकर प्रसाद का 'करुणालय' (1912), माखनलाल चतुर्वेदी का 'कृष्णार्जुन–युद्ध' (1918) उल्लेखनीय है। ये नाटक उपदेशात्मक अधिक हैं।

ऐतिहासिक नाटकों में गंगाप्रसाद गुप्त का 'वीर जयमल' (1903), वृंदावनलाल वर्मा का 'सेनापति उदल' (1909), बद्रीनाथ भट्ट का 'चन्द्रगुप्त' (1915), जयशंकर प्रसाद का 'राज्यश्री' (1915) उल्लेखनीय है। वस्तुतः हिंदी साहित्य में ऐतिहासिक नाटकों का सूत्रपात प्रसाद से ही हुआ है।

सामयिक उपादानों पर आधारित नाटकों में प्रतापनारायण मिश्र का 'भारत–दुर्दशा' (1902), भगवतीप्रसाद का 'वृद्ध–विवाह' (1905), जीवानन्द शर्मा का 'भारत–विजय' (1906), कृष्णानन्द जोशी का 'उन्नति कहां से होगी' (1915) और मिश्रबन्धु का 'नेत्रोन्मीलन' (1915) उल्लेखनीय है। इन नाटकों में तत्कालीन सामाजिक–राजनीतिक जीवन की विकृतियों को उभारने की चेष्टा की गई है।

रोमांचकारी नाटक मुख्यतः रोमांचकारी एवं अलौकिक घटनाओं के केन्द्र में रखकर पारसी रंगमंच की दृष्टि से लिखे गए। इन्हें मंचीय नाटक भी कहा गया है। ये व्यवसायी नाटक–मण्डलियों के लिए लिखे गए। रोमांचकारी नाटकों में मोहम्मद मिया का 'रौनक', हुसैन मिया का 'जरीफ', मुंशीविनायक प्रसाद का 'तालिब', सैयद मेहंदी हसन का 'अहसान' आगा मोहम्मद का 'हश्र'

उल्लेखनीय है। इन नाटककारों में राधेश्याम कथावाचक का नाम महत्त्वपूर्ण है। इन्होंने अपने नाटकों को चमत्कारपूर्ण बनाने के लिए परदों की तड़क–भड़क और वेश–भूषा की चमक–दमक के साथ दृश्यों में अद्‌भुत तत्वों का समावेश किया जैसे– आकाश–मार्ग से देवताओं का जाना, तारों का टूटना, पुष्पवर्षा करना, खम्भों का टूटना और उनमें से पात्रों का निकलना आदि।

इस युग में प्रहसन भी लिखे गए जिनमें बद्रीनाथ भट्‌ट का 'चुकी की उम्मीदवारी' (1912), गंगाप्रसाद श्रीवास्तव का 'उलटफेर' (1918), और 'नोक–झोंक' (1918) प्रमुख है।

इस युग में संस्कृत, अंग्रेजी और बंगला भाषा से कुछ नाटकों के अनुवाद भी हुए। संस्कृत से श्री सदानन्द अवस्थी ने 'नागानन्द' (1906), लाला सीताराम ने 'मृच्छकटिक'(1913) और कविरत्न सत्यनारायण ने 'उत्तररामचरित' का अनुवाद किया। फ्रांस के प्रसिद्ध नाटककार मोलियर के नाटकों को लल्लीप्रसाद पाण्डेय और गंगाप्रसाद श्रीवास्तव ने अंग्रेजी के माध्यम से अनुवाद किया।

उपन्यास

इस काल में उपन्यास नाटक की अपेक्षा अधिक लिखे गए। इस काल के लेखकों और पाठकों की प्रवृत्ति कुतूहल, रहस्य और रोमांच के माध्यम से मनोरंजन करने में अधिक रही है। सामाजिक जीवन की यथार्थ समस्याओं को लेकर गम्भीर उपन्यासों की रचना इस युग में कम हुई। इस युग में तिलस्मी–ऐयारी, जासूसी, अद्‌भुत घटनाप्रधान, ऐतिहासिक एवं सामाजिक उपन्यास अधिक लिखे गए।

तिलस्मी–ऐयारी उपन्यासों की परंपरा देवकीनन्दन खत्री (1861–1913) द्वारा भारतेन्दु युग में आरंभ की गई जो द्विवेदी युग में भी जीवित रही। खत्री जी के 'काजर की कोठरी' (1902), 'अनूठी बेगम' (1905), 'गुप्त गोदना' (1906), 'भूतनाथ'–प्रथम छह भाग (1906) आदि उपन्यास प्रकाशित हुए। हरेकृष्ण जौहर ने 'मयंकमोहिनी या मायामहल' (1901), 'कमलकुमारी' (1902), 'निराला नकाबपोश' (1902), 'भयानक खून' (1903) आदि तिलस्मी उपन्यास लिखे। किशोरीलाल गोस्वामी ने 'तिलस्मी शीशमहल' (1905) और रामलाल वर्मा 'पुतली महल' (1908) भी इसी वर्ग की रचनाएँ हैं। आगे चलकर देवकीनन्दन खत्री के सुपुत्र दुर्गाप्रसाद खत्री ने 'भूतनाथ' के शेष भागों को लिखकर इस परंपरा को आगे बढ़ाया।

जासूसी उपन्यासों का प्रवर्तन गोपालराम गहमरी (1866–1946) ने किया। गहमरी जी अंग्रेजी के प्रसिद्ध जासूसी उपन्यासकार आर्थर कानन डायल से प्रभावित थे। आर्थर के उपन्यास 'ए स्टडी इन स्कारलेट' (1887) का इन्होंने 'गोविन्दराम' (1905) नाम से अनुवाद किया। 'सरकटी लाश' (1900), 'चक्करदार चोरी' (1901), 'जासूस की भूल' (1901), 'जासूस पर जासूसी' (1904), 'जासूस चक्कर में' (1906), 'इन्द्रजालिक जासूस' (1910), 'गुप्त भेद' (1913), 'जासूस की ऐयारी' (1914) आदि उनके प्रसिद्ध जासूसी उपन्यास हैं।

अद्‌भुत घटनाप्रधान उपन्यासों में विट्‌ठलदास नागर का 'किस्मत का खेल' (1905), बांकेलाल चतुर्वेदी का 'खौफनाक खेल' (1912), निहालचन्द वर्मा का 'प्रेम का फल या मिस जौहरा' (1913), प्रेमविलास वर्मा का 'प्रेममाधुरी या अनंगकान्ता' (1915) और दुर्गाप्रसाद खत्री का 'अद्‌भुत भूत'(1916) प्रमुख हैं।

इस युग में ऐतिहासिक उपन्यास भी लिखे गए परंतु इन उपन्यासों में इतिहास तत्वों की कमी थी। ये उपन्यास भी रहस्य एवं रोमांच से प्रेरित थे। ऐतिहासिक उपन्यासकारों में किशोरीलाल गोस्वामी (1865–1932) इस युग के सशक्त उपन्यासकार हैं। किशोरीलाल गोस्वामी के 'तारा वा क्षात्रकुलकमलिनी' (1902), 'सुल्ताना रजिया बेगम वा रंगमहल में हलाहल' (1904), 'मल्लिका देवी वा बंग सरोजिनी' (1905), और 'लखनऊ की कब्र व शाही महलसरा' (1917) चर्चित उपन्यास हैं। गंगाप्रसाद गुप्त ने 'नूरजहाँ'(1902), 'कुमारसिंह सेनापति' (1903) और 'हम्मीर' (1903) उपन्यास लिखे। जयरामदास गुप्त के 'काश्मीर पतन' (1907), 'नवाबी परिस्तान वा वाजिद अली शाह'(1909), 'मल्का चांद बीबी' (1909) आदि उपन्यास लिखे।

सामाजिक उपन्यासकारों में लज्जाराम शर्मा, किशोरीलाल गोस्वामी, अयोध्यासिंह उपाध्याय, ब्रजनन्दन सहाय, राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह और मन्नन द्विवेदी उल्लेखनीय हैं। लज्जाराम शर्मा (1863–1931) के 'आदर्श दम्पत्ति' (1904), 'बिगड़े का सुधार अथवा सती सुखदेवी' (1907), 'आदर्श हिन्दू' (1914) उपन्यासों का विशेष महत्त्व है। किशोरीलाल गोस्वामी के 'लीलावती वा आदर्श सती' (1901), 'चपला वा नव्य समाज' (1903–1904), 'पुनर्जन्म वा सौतिया डाह' (1907), 'माधवी माधव या मदनमोहिनी' (1903–1910) और 'अंगूठी का नगीना' (1918) उपन्यासों को विशेष ख्याति मिली। अध्योध्यासिंह उपाध्याय ने 'अधखिला फूल' (1907) तथा 'ठेठ हिन्दी का ठाठ' (1899) लिखे। ब्रजनन्दन सहाय के 'सौन्दर्योपासक' (1911) और 'राधाकान्त' (1912) ये दो उपन्यास अधिक प्रसिद्ध हुए। मन्नन द्विवेदी का 'रामलाल' (1917) में ग्रामीण जीवन का सजीव और यथार्थ चित्रण मिलता है। राधिकारमणप्रसाद सिंह का 'नवजीवन वा प्रेमलहरी' (1916) प्रेमाकुलतापूर्ण भावात्मक उपन्यास है।

आगे चलकर इन सामाजिक उपन्यासों ने प्रेमचन्द की उपन्यास रचना के लिए मार्ग पुष्ट किया। सामाजिक उपन्यासों का लक्ष्य समाज–सुधार था। प्रेमचन्द भी इसी उद्देश्य से प्रेरित थे। उनके 'प्रेमा' (1907), 'रूठी रानी' (1907) और 'सेवासदन' (1918) इसी युग में प्रकाशित हुए।

कहानी

सन् 1900 के लगभग हिंदी कहानी का जन्म हुआ और 1912 से 1918 ई. के बीच वह पूर्णतः प्रतिष्ठित हो गई। 'सरस्वती' (1900) पत्रिका के प्रकाशन के साथ ही हिंदी कहानी का भी विकास हुआ। आरंभिक लेखकों में किशोरीलाल गोस्वामी, माधवप्रसाद मिश्र, बंगमहिला, रामचन्द्र शुक्ल, जयशंकर प्रसाद, वृन्दावनलाल वर्मा आदि उल्लेखनीय हैं। किशोरीलाल गोस्वामी की 'इन्दुमती' कहानी सरस्वती में 1900ई. में प्रकाशित हुई। यह शेक्सपियर के 'टेम्पेस्ट' नाटक के आधार पर लिखी गई थी। सन् 1900 ई. में ही माधवप्रसाद मिश्र की 'मन की चंचलता' सुदर्शन पत्रिका में प्रकाशित हुई। 1902 ई. में 'सरस्वती' में ही भगवानदीन बी.ए. की 'प्लेग की चुड़ैल' कहानी प्रकाशित हुई। इनके अतिरिक्त 'सरस्वती' में रामचन्द्र शुक्ल की 'ग्यारह वर्ष का समय' (1903) और बंगमहिला की 'दुलाईवाली' (1907) कहानियाँ प्रकाशित हुईं।

ऐतिहासिक कहानी लेखकों में वृंदावन लाल वर्मा प्रमुख हैं। इन्होंने 1909ई. में 'राखीबन्द भाई' लिखी। 1909 ई. में काशी से 'इन्दु' पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ। इसमें जयशंकर प्रसाद ने खूब कहानियाँ लिखीं। इनकी कहानियों का संग्रह 'छाया' नाम से सन् 1912 में प्रकाशित हुआ। राधिकारमण सिंह की कहानी 'कानों में कंगना' (1913) 'इंदु' में प्रकाशित हुई। कुछ समय पश्चात प्रेमचंद का आगमन हुआ। उनकी कहानियाँ सरस्वती में प्रकाशित हुई जो इस प्रकार हैं – 'सौत' (1915), 'पंच परमेश्वर' (1916), 'सज्जनता का दण्ड' (1916), 'ईश्वरीय न्याय' (1917), 'दुर्गा का मन्दिर' (1917)।

चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' की प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' सन् 1915 में 'सरस्वती' पत्रिका में छपी थी। इनके अतिरिक्त 'सरस्वती' में ही ज्वालादत्त शर्मा की 'मिलन', विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' की 'रक्षा बंधन', पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी की 'झलमला' प्रकाशित हुईं। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सन् 1900 के आस–पास हिंदी कहानी का जन्म हुआ और 1918 तक वह पूर्णतः प्रतिष्ठित हो गई। साहित्य में उसकी स्वतंत्र सत्ता मान्य हुई और इसका मौलिक रूप भी सामने आया।

निबंध

भारतेन्दु–युग में पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से निबन्ध–साहित्य की पूर्ण प्रतिष्ठा हो चुकी थी। इस युग के निबंध लेखकों में महावीरप्रसाद द्विवेदी, गोविन्दनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, माधवप्रसाद मिश्र, मिश्रबन्धु (श्यामबिहारी मिश्र और शुकदेवबिहारी मिश्र), सरदार पूर्णसिंह, चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी', जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, श्यामसुन्दरदास, पद्मसिंह शर्मा, रामचन्द्र शुक्ल, कृष्णबिहारी मिश्र आदि उल्लेखनीय हैं।

महावीर प्रसाद द्विवेदी के निबंध परिचयात्मक या आलोचनात्मक टिप्पणियों के रूप में हैं। उनका 'म्युनिसिपैलिटी कारनामे' निबंध व्यंग्य शैली में लिखा है। 'आत्मनिवेदन', 'प्रभात', 'सुतापराधे जनकस्य दण्ड' आदि इनके अन्य चर्चित निबंध हैं। गोविन्दनारायण मिश्र अपनी पाण्डित्यपूर्ण, संस्कृतनिष्ठ, तत्समप्रधान समासबहुला, दीर्घ वाक्य–विन्यासपूर्ण गद्य–शैली के लिए जाने जाते हैं। बालमुकुन्द गुप्त (1965–1907) हिंदी साहित्य में 'शिवशम्भु का चिट्ठा' के लिए जाने जाते हैं। ये चिट्ठे 'भारतमित्र' पत्रिका में प्रकाशित हुए। माधवप्रसाद मिश्र के निबंध 'सुदर्शन' में प्रकाशित हुए। इनके निबंध 'पुष्पांजलि'(1916) में संकलित हैं।

सरदार पूर्ण सिंह (1881–1939) इस युग के श्रेष्ठ निबंधकार हैं। इन्होंने कुल छह निबंध लिखे और प्रसिद्ध हो गए। इन्होंने नैतिकता और सामाजिकता को लेकर निबंध लिखे। 'आचरण की सभ्यता', 'सच्ची वीरता', 'मजदूरी और प्रेम', 'पवित्रता' और 'कन्यादान' इनके प्रसिद्ध निबंध हैं। चन्द्रधर शर्मा 'गुलेरी' (1883–1920) की साहित्य क्षमता अप्रतिम थी। ये पुरातत्त्व के मान्य विद्वान थे। 'कछुवा धरम' और 'मारेसि मोहिं कुठांव' इनके बहुचर्चित निबंध हैं।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के श्रेष्ठ मनोवैज्ञानिक निबंध 1912 ई. से 1919 ई. तक 'नागरीप्रचारिणी पत्रिका' में प्रकाशित हुए थे। इनके 'भय और क्रोध', 'ईर्ष्या', 'घृणा', 'उत्साह', 'श्रद्धा–भक्ति', 'करुणा', 'लज्जा और ग्लानि' तथा 'लोभ और प्रीति' निबंध द्विवेदी युग में प्रकाशित

हुए। गणेशशंकर विद्यार्थी, मन्नन द्विवेदी, यशोदानन्दन अखौरी, केशवप्रसाद सिंह भी इस युग के चर्चित निबंधकार रहे। इस युग में समाज की हीनावस्था, आर्थिक विषमता, धार्मिक पतन और व्यापक राष्ट्रीय समस्याओं को लेकर निबंध लिखे गए। शैली की दृष्टि से इस युग में वर्णनात्मक, भावात्मक, विवरणात्मक, विचारात्मक, कथात्मक, शोधपरक आदि सभी शैलियों में निबंध लिखे गए।

आलोचना

इस युग में आलोचना का भी विकास हुआ। जगन्नाथप्रसाद 'भानु' ने 'काव्य प्रभाकर' (1910) तथा 'छंद सारावली' (1917) और लाला भगवानदीन ने 'अलंकार मंजूषा' (1916) नामक आलोचना लिखी। तुलनात्मक आलोचना का आरंभ 1907ई. में पद्मसिंह शर्मा ने बिहारी और सादी की तुलना द्वारा किया। इसी कड़ी में मिश्रबन्धुओं का 'हिन्दी नवरत्न' (1910) प्रकाशित हुआ। आगे चलकर लाला भगवानदीन और कृष्णबिहारी मिश्र ने बिहारी और देव पर आलोचना लिखी। अन्वेषण और अनुसन्धानपरक आलोचना का विकास 'नागरीप्रचारिणी पत्रिका' (1897) के प्रकाशन से हुआ। 'मिश्रबन्धु–विनोद' (1913) में भी शोधपरक दृष्टि को महत्त्व दिया गया।

'सरस्वती' के माध्यम से परिचयात्मक आलोचना का आरंभ हुआ। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने 'सरस्वती' में परिचयात्मक आलोचना लिखीं। बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमघन' ने 'संयोगिता स्वयंवर', बालकृष्ण भट्ट ने 'नीलदेवी', 'परीक्षागुरु' और 'संयोगिता स्वयंवर' पर व्याख्यात्मक आलोचना लिखी।

जीवनी

इस युग में जीवनी लेखन भी पर्याप्त हुआ। यह युग राष्ट्रीय चेतना का युग था। आजादी की अलख जगाने के लिए इस युग में महापुरुषों के जीवन पर आधारित जीवनियाँ लिखी गईं। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी ने 'प्राचीन पंडित और कवि', (1918), 'संकवि संकीर्तन' (1924), 'चरित चर्चा' (1929) आदि जीवनी संग्रह लिखे। इस युग में आर्य समाज तथा अन्य महापुरुषों से संबंधित, राष्ट्रीय महापुरुषों से संबंधित, ऐतिहासिक महापुरुषों से संबंधित, विदेश के महापुरुषों से संबंधित तथा महिलाओं से संबंधित जीवनियाँ प्रचुर मात्रा में लिखी गईं। रामविलास सारदा ने 'आर्य धर्मेन्दु जीवन महर्षि', चिम्मनलाल वैश्य ने 'दयानन्द चरितामृत' (1904) और अखिलानन्द शर्मा ने 'दयानन्द दिग्विजय' (1910) नामक जीवनी लिखी।

राष्ट्रीय नेताओं से संबंधित जीवनियों में महादेव भट्ट 'लाजपत महिमा' (1907), पारसनाथ त्रिपाठी 'तपोनिष्ठ महात्मा अरविंद घोष (1909), मुकुन्दीलाल वर्मा ''कर्मवीर गाँधी' (1913), सम्पूर्णानन्द 'धर्मवीर गाँधी' (1914), नन्दकुमार देव शर्मा 'महात्मा गोखले' (1914), बद्रीप्रसाद गुप्त 'दादाभाई नौरोजी' (1914), बृजबिहारी शुक्ल, 'मदनमोहन मालवीय' (1916), शीतलाचरण वाजपेयी 'रमेशचन्द्र दत्त' (1914), मातासेवक 'लोकमान्य तिलक का चरित्र' (1918) प्रमुख हैं।

ऐतिहासिक जीवनियों में कार्तिक प्रसाद खत्री की 'छत्रपति शिवाजी का जीवनचरित्र' 'लोकमान्य तिलक का चरित्र' (1901), बलदेवप्रसाद मिश्र की 'पृथ्वीराज चौहान' 'लोकमान्य तिलक

का चरित्र' (1902), देवीप्रसाद की 'महाराणा प्रतापसिंह' 'लोकमान्य तिलक का चरित्र' (1903) प्रमुख हैं।

विदेशी महापुरुषों पर लिखी जीवनियों में सिद्धेश्वर शर्मा की 'गैरीबाल्डी' 'लोकमान्य तिलक का चरित्र' (1901), उमापति दत्त शर्मा की 'नेपोलियन बोनापार्ट की जीवनी' 'लोकमान्य तिलक का चरित्र' (1905), नाथूराम प्रेमी ब्रह्मानन्द की 'जान स्टुअर्ड मिल' 'लोकमान्य तिलक का चरित्र' (1912) आदि प्रमुख हैं। राजस्थान के इतिहास लेखन में महत्त्वपूर्ण योग देने वाले कर्नल टॉड के संबंध में एक अन्य महत्त्वपूर्ण जीवनी गौरीशंकर ओझा ने 'कर्नल टॉड' (1902) शीर्षक से लिखी।

देशी–विदेशी महान् महिलाओं पर भी जीवनियाँ लिखी गईं, जिनमें गंगाप्रसाद गुप्त 'रानी भवानी' (1904), परमानन्द 'पतिव्रता स्त्रियों के जीवन चरित्र' (1904), हनुमन्त सिंह 'रमणीय रत्नमाला' (1907), पन्नालाल 'वीरपत्नी संयोगिता' (1912), यशोदादेवी 'आदर्श महिलाएँ' (1912), द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी 'ऐतिहासिक स्त्रियाँ' (1912) आदि प्रमुख हैं।

यात्रावृत्त

यात्रावृत्त के विकास की दृष्टि से भी आलोच्य युग महत्त्वपूर्ण है। इस युग की आलोचनाएँ पत्र–पत्रिकाओं और पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित हुईं। स्वामी मंगलानन्द ने 'मारीशस–यात्रा' (मर्यादा, 1912), श्रीधर पाठक ने 'देहरादून–शिमला–यात्रा' (मर्यादा, जून–सितम्बर 1913), उमा नेहरू ने 'युद्ध–क्षेत्र की सैर' (गृहलक्ष्मी, 1914) और लोचनप्रसाद पाण्डेय ने 'हमारी यात्रा' (इन्दु, सितम्बर 1914) यात्रावृत्तांत लिखे।

पुस्तकाकार रूप में गोपालराम गहमरी ने 'लंका–यात्रा का विवरण'(1916), ठाकुर गदाधर सिंह ने 'चीन में तेरह मास' (1902), 'हमारी एडवर्ड तिलक यात्रा' (1903–04) नामक यात्रावृत्तांत लिखे। स्वामी सत्यदेव परिव्राजक इस युग के प्रमुख यात्रावृत्त लेखक थे। इनकी तीन कृतियाँ उपलब्ध हैं – 'अमरीका दिग्दर्शन' (1911), 'मेरी कैलास–यात्रा' (1915) तथा 'अमरिका भ्रमण' (1916)।

संस्मरण

इस युग में 'सरस्वती' पत्रिका में कुछ संस्मरण भी समय–समय पर छपे, जिनमें महावीर प्रसाद द्विवेदी के 'अनुमोदन का अन्त' (फरवरी, 1905), 'सभा की सभ्यता' (अप्रैल, 1907), 'विज्ञानाचार्य बसु का विज्ञान मन्दिर' (जनवरी 1918), रामकुमार खेमका 'इधर–उधर की बातें' (मई, 1918), जगद्‌बिहारी सेठ 'मेरी बड़ी छुट्‌टियों का प्रथम सप्ताह' (जून 1913), प्यारेलाल मिश्र 'लन्दन का फाग या कुहरा' (फरवरी 1908) प्रमुख हैं। पुस्तकाकार रूप में प्रकाशित संस्मरण–साहित्य की दृष्टि से 'हरिऔध जी के संस्मरण' ही इस युग की उल्लेखनीय कृति है।

छायावाद (1918–1936)

छायावाद का समय सन् 1918 से सन् 1938 तक माना जा सकता है। रामचन्द्र शुक्ल ने छायावाद का आरंभ सन् 1918 से माना है। इस काल के आस–पास साहित्य में एक नए मोड़ का

आरंभ हो गया था, जो पुरानी काव्य–पद्धति को छोड़कर एक नई पद्धति के निर्माण का सूचक था। निराला की 'जूही की कली' (1916) और पंत की 'पल्लव' की कुछ कविताएँ सन् 1920 के आसपास आ चुकी थीं। छायावाद के लगभग 20 सालों में विपुल साहित्य रचा गया। एक ओर प्रसाद, निराला आदि कवि भी इसी युग में हुए जिनका प्रधान लक्ष्य साहित्य–साधना था और दूसरी ओर माखनलाल चतुर्वेदी, रामनरेश त्रिपाठी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' आदि रचनाकार भी हुए जो अपने युग के आंदोलनों में सक्रिय भाग लेते थे और कविताएँ भी करते थे। इनकी काव्य साधना जीवन को केंद्र बनाकर चलती थी। इनके अतिरिक्त बच्चन, नरेन्द्र शर्मा और अंचल की अनेक रचनाएँ भी इस युग में रची गईं।

छायावाद के इस काल में कवित्व की दृष्टि से अनुभूति की तीव्रता, सूक्ष्मता और अभिव्यंजना–शिल्प के उत्कर्ष की दृष्टि से यह काव्य श्रेष्ठ है। इस काल के काव्य में प्राचीन भारतीय परंपरा के जीवन्त तत्वों का ही समावेश नहीं हुआ, वरन् उसने परवर्ती काव्य के विकास को भी काफी प्रभावित किया। छायावादी काव्य में ही अपने युग के जन–जीवन की समग्रता की अभिव्यक्ति मिलती है–यह काव्य पूर्ण और सर्वांगीण जीवन के उच्चतम आदर्श को व्यक्त करने का प्रयास करता है। छायावाद का युग भारत के अस्मिता की खोज का युग है।

इस युग की एक प्रमुख प्रवृत्ति है – राष्ट्रीय और सांस्कृतिक काव्य का सृजन। इस राष्ट्रीय सांस्कृतिक धारा के मुख्य कवि हैं – माखनलाल चतुर्वेदी, सियारामशरण गुप्त, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', सुभद्राकुमारी चौहान आदि।

माखनलाल चतुर्वेदी (1889–1968) का जन्म मध्यप्रदेश के जिला होशंगाबाद के गाँव बाबई में हुआ। इन्होंने 'प्रभा', 'प्रताप' तथा 'कर्मवीर' पत्रिकाओं का संपादन किया। इनका उपनाम 'एक भारतीय आत्मा' था। इनके कविता संग्रह 'हिमकिरीटिनी' और 'हिमतरंगिनी' हैं। इनकी रचनाओं में देश के प्रति गम्भीर प्रेम और देश–कल्याण के लिए आत्मोत्सर्ग की उत्कट भावना दिखाई देती है। 'पुष्प की अभिलाषा' इनकी प्रसिद्ध कविता है।

सियारामशरण गुप्त (1895–1963) का जन्म उत्तरप्रदेश के जिला झाँसी के चिरगाँव नामक ग्राम में हुआ। ये मैथिलीशरण गुप्त के छोटे भाई थे। ये समरसता और नम्रता की प्रतिमूर्ति थे। इनकी पहली रचना सन् 1910 में 'इन्दु' पत्रिका में प्रकाशित हुई। 'मौर्य विजय', 'अनाथ', 'दूर्वादल', 'विषाद', 'आर्द्रा', 'पाथेय', 'मृण्मयी', 'बापू', 'दैनिकी' आदि इनके प्रसिद्ध काव्य संग्रह हैं। इनकी सभी रचनाओं पर अहिंसा, सत्य, करुणा, विश्वबन्धुत्व, शांति और गाँधीवादी मूल्यों का गहरा प्रभाव दिखाई देता है।

बालकृष्ण शर्मा 'नवीन' (1897–1960) का जन्म ग्वालियर के भयाना गाँव में हुआ था। इन्होंने 'प्रभा' तथा 'प्रताप' पत्रिकाओं का भी संपादन किया। 'कुंकुम' (1939) इनका पहला कविता–संग्रह है। 'उर्म्मिला' काव्य इन्होंने (1934) में ही लिख लिया था किंतु उसका प्रकाशन 1975 ई. में हुआ। इनके अन्य काव्य ग्रंथ हैं – 'अपलक', 'रश्मिरेखा', 'क्वासि' तथा 'हम विषपायी जनम के।' 'नवीन' जी की रचनाओं में प्रणय और राष्ट्रप्रेम दोनों भावों की उत्तम अभिव्यक्ति हुई है। ये स्वच्छदाता, प्रेम और मस्ती के कवि के रूप में अधिक जाने जाते हैं।

सुभद्राकुमारी चौहान (1905–1948) का जन्म प्रयाग के निहालपुर गाँव में हुआ था। ये शिक्षा अधूरी छोड़ कर स्वतंत्रता के आंदोलन में कूद पड़ीं। स्वतंत्रता आंदोलन के समय ये कई बार जेल भी गईं। इनकी कविताएँ 'त्रिधारा' और 'मुकुल' में संकलित हैं। इनकी कविता 'झांसी की रानी' तो सामान्य जन–जन में बहुत प्रसिद्ध हुई। इन्होंने राष्ट्रप्रेम के साथ–साथ पारिवारिक परिदृश्य पर भी रचनाएँ लिखीं।

इनके साथ ही रामनरेश त्रिपाठी, उदयशंकर भट्ट, जगन्नाथप्रसाद मिलिन्द, दिनकर आदि ने भी राष्ट्रीय–सांस्कृतिक धारा की कविताएँ लिखीं। रामनरेश त्रिपाठी ने 'मानसी' (1927), 'पथिक' (1920) और 'स्वप्न' (1929) खण्डकाव्य लिखे। उदयशंकर भट्ट ने 'तक्षशिला'(1929), दिनकर ने 'रेणुका' (1935) कविता संग्रह लिखे।

छायावादी कवि

जयशंकर प्रसाद (1890–1937) का जन्म काशी के एक सम्पन्न घराने में हुआ था, जो 'सुंघनी साहु' के नाम से प्रसिद्ध था। कवि होने के साथ–साथ ये गंभीर चिंतक भी थे। 'कामायनी' (1935) इनका प्रसिद्ध महाकाव्य है। इनकी काव्य रचनाएँ हैं 'वनमिलन' (1909), 'प्रेमराज्य' (1909), 'अयोध्या का उद्धार' (1910), 'शोकोच्छ्वास' (1910), 'वभ्रुवाहन' (1911), 'कानन कुसुम' (1913), 'प्रेम पथिक' (1913), 'करुणालय' (1913), 'महाराणा का महत्त्व' (1914), 'झरना' (1918), 'आंसू' (1924), 'लहर' (1933)। इनकी कविताओं में स्वार्थ का निषेध कर भारतीय समाज और विश्व के कल्याण की प्रतिष्ठा की गई है।

सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला (1897–1962) का जन्म महिषादल स्टेट मेदिनीपुरी (बंगाल) में बसंत पंचमी को हुआ। इनका जीवन अनेक अभावों एवं विपत्तियों से भरा रहा। ये अपनी धुन के पक्के और फक्कड़ स्वभाव के व्यक्ति थे। इनकी रचनाएँ हैं – 'जूही की कली' (1916), 'अनामिका' (1923), 'परिमल' (1930), 'गीतिका' (1936), 'तुलसीदास' (1937)। इन्होंने 'मतवाला' और 'समन्वय' का संपादन भी किया। इनकी लम्बी कविता 'राम की शक्तिपूजा' इनकी ही नहीं वरन् संपूर्ण छायावादी काव्य की एक उत्कृष्ट उपलब्धि है।

सुमित्रानन्दन पंत (1900–1970) का जन्म उत्तरप्रदेश के जिला उल्मोड़ा के कौसानी ग्राम में हुआ था। बचपन में मातृस्नेह से वंचित हुए बालक पंत का मन अल्मोड़ा की प्राकृतिक सुषमा की ओर आकृष्ट हुआ। पंत की पहली कविता 'गिरजे का घण्टा' (1916) है। अनके काव्य ग्रंथ हैं – 'उच्छवास' (1920), 'ग्रन्थि' (1920), 'वीणा' (1927), 'पल्लव' (1928), और 'गुंजन' (1932)। 'वीणा' इनका अंतिम छायावादी काव्य–संग्रह कहा जा सकता है। पन्त के काव्य में प्रकृति के मनोरम रूपों का मधुर और सरस चित्रण मिलता है।

महादेवी वर्मा (1907–1987) का जन्म उत्तरप्रदेश के फर्रुखाबाद में हुआ। इनकी काव्य संग्रह हैं – 'नीहार' (1930), 'रश्मि' (1932), 'नीरजा' (1935) और 'सान्ध्यगीत' (1936)। 'यामा' (1940) में 'नीहार', 'रश्मि', 'नीरजा' और 'सान्ध्यगीत' के सभी गीतों का संग्रह है।

छायावाद के अन्य कवियों में माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा 'नवीन', भगवतीचरण वर्मा, डॉ. रामकुमार वर्मा, मोहनलाल महतो 'वियोगी', लक्ष्मीनारायण मिश्र, जनार्दनप्रसाद झा 'द्विज' गोपालसिंह नेपाली, केदारनाथ मिश्र 'प्रभात', आर.सी.प्रसाद सिंह आदि उल्लेखनीय हैं।

इस काल में प्रेम और मस्ती का काव्य भी खूब लिखा गया। इन कवियों में हरिवंशराय 'बच्चन', नरेन्द्र शर्मा, गोपालसिंह नोपाली, हृदयेश, हरिकृष्ण 'प्रेमी', अंचल आदि उल्लेखनीय हैं। इन कवियों की कविताओं में जीवन से भागने की नहीं वरन् जीवन की विषमताओं को एक सामान्य अनुभूति के स्तर पर सुलझाने की ललक दिखाई पड़ती है।

निष्कर्ष रूप में कह सकते हैं कि छायावाद में स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति मिलती है किन्तु इसमें नैतिक दृष्टि प्रधान है। छायावादी काव्य सर्ववाद, कर्मवाद, वेदांत, शैव दर्शन, अदवतवाद, भक्ति आदि भारतीय सिद्धांतों को लेकर चलता है। इसकी अभिव्यंजना शैली में नवीनता है।

छायावाद काल का गद्य साहित्य

नाटक

हिंदी नाटक साहित्य की दृष्टि से इस युग को 'प्रसाद युग' कहना उचित है। प्रसाद जी ने 1918 ई. के पूर्व से ही नाटक लिखने प्रारंभ कर दिए थे। उनकी आरंभिक रचनाएँ 'सज्जन', 'कल्याणी–परिणय', 'प्रायश्चित', 'करुणालय', 'राज्यश्री' हैं। इनके अतिरिक्त 'विशाख' (1921), 'अजातशत्रु' (1922), 'कामना' (1927), 'जनमजेय का नाग यज्ञ' (1926), 'स्कन्दगुप्त' (1928), 'एक घूंट' (1930), 'चन्द्रगुप्त' (1931) और 'ध्रुवस्वामिनी' (1933) ने हिंदी नाट्य साहित्य को विशिष्ट स्तर एवं गरिमा प्रदान की। वस्तुत हिंदी उपन्यास और कहानी के क्षेत्र में जो स्थान प्रेमचंद का है, वही नाटक के क्षेत्र में प्रसाद का है। द्विवेदी युग में हुई नाट्यलेखन की क्षतिपूर्ति जयशंकर प्रसाद ने की। भारतेन्दु द्वारा स्थापित की गई हिंदी नाटक और रंगमंच की परम्परा को जयशंकर प्रसाद ने ही नया जीवन और नई दिशा प्रदान की। प्रसाद जी मुख्यतः ऐतिहासिक नाटककार के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

प्रसाद के अतिरिक्त हरिकृष्ण 'प्रेमी' और लक्ष्मीनारायण मिश्र विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। हरिकृष्ण प्रेमी ने इस अवधि में 'स्वर्णविहान' (1930), 'रक्षाबन्धन' (1934), 'पाताल विजय' (1936), 'प्रतिशोध' (1937), 'शिवासाधना' (1937) आदि नाटक लिखे। इनमें 'स्वर्णविहान' गीतिनाटक है। लक्ष्मीनारायण मिश्र ने इस काल में 'अशोक' (1927), 'संन्यासी' (1929), 'मुक्ति का रहस्य' (1932), 'राक्षस का मन्दिर' (1932), 'राजयोग' (1934), 'सिन्दूर की होली' (1934), 'आधी रात' (1934) आदि नाटकों की रचना की।

इनके अतिरिक्त अम्बिकादत्त त्रिपाठी, रामचरित उपाध्याय, रामनरेश त्रिपाठी, गंगाप्रसाद अरोड़ा, गौरीशंकर प्रसाद, परिपूर्णानन्द, वियोगी हरि, गोकुलचन्द्र वर्मा, कैलाशनाथ भटनागर, लक्ष्मीनारायण गर्ग, सेठ गोविन्ददास, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध' आदि के नाटक भी उल्लेखनीय हैं। यह काल नाटक साहित्य के लिए समृद्ध काल कहा जा सकता है। इस काल में ऐतिहासिक, धार्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, सांस्कृतिक चेतना एवं यथार्थपरक नाटक लिखे गए।

एकांकी नाटक

एकांकी लेखन का प्रचलन छायावाद काल में ही हुआ, यों आरंभ से ही एकांकी लेखन के छिटपुट प्रयास होने लगे थे। उदाहरण के लिए महेशचन्द्र प्रसाद के 'भारतेश्वर का सन्देश' (1918), देवीप्रसाद गुप्त के 'उपाधि और व्याधि' (1921), तथा रूपनारायण पाण्डेय 'प्रायश्चित प्रहसन' (1923) उल्लेखनीय हैं। बदरीनाथ भट्ट के एकांकी–संग्रह 'लबड़ धों धों' (1926) में मनोरंजक प्रहसन संकलित हैं। हनुमान शर्मा के एकांकी संग्रह 'मान–विजय' (1926), बेचन शर्मा 'उग्र' का 'चार बेचारे' (1929) और प्रसाद का 'एक घूँट' (1930) भी इस काल की उल्लेखनीय रचनाएँ हैं।

हिंदी में पश्चिमी ढंग के एकांकी नाटकों का प्रणयन 1930 ई. के बाद हुआ। इस क्रम में रामकुमार वर्मा के 'बादल की मृत्यु' (1930), भुवनेश्वरप्रसाद 'कारवां' (1935) उल्लेखनीय रचनाएँ हैं। अन्य एकांकीकारों में गणेशप्रसाद द्विवेदी का 'सोहागबिन्दी तथा अन्य नाटक' (1934), उदयशंकर भट्ट का 'दुर्गा' (1934) और 'एक ही कब्र में' (1936), सेठ गोविन्ददास का 'स्पर्द्धा' (1935), जगदीशचन्द्र माथुर का 'मेरी बांसुरी' (1936) और 'भोर का तारा' (1937) और भगवतीचरण वर्मा का एकांकी 'सबसे बड़ा आदमी' (1936) विशेष लोकप्रिय हुए।

उपन्यास

उपन्यास लेखन के लिए इस युग को निर्विवाद रूप से 'प्रेमचन्द–युग' कहा गया है क्योंकि 'सेवासदन' (1918) का प्रकाशन न केवल प्रेमचन्द (1880–1936) के साहित्यिक जीवन की वरन् हिंदी उपन्यास की एक महत्त्वपूर्ण घटना थी। प्रेमचन्द जी का जन्म वाराणसी जिले के लमही ग्राम में हुआ था। 'सेवासदन' के बाद प्रेमचन्द के 'प्रेमाश्रय' (1922), 'रंगभूमि' (1925), 'कायाकल्प' (1926), 'निर्मला' (1927), 'गबन' (1931), 'कर्मभूमि' (1933) और 'गोदान' (1935) शीर्षक सात मौलिक उपन्यास प्रकाशित हुए। पहले प्रेमचन्द उर्दू में लिखा करते थे। प्रेमचन्द हिंदी कथा साहित्य को 'मनोरंजन' के स्तर से उठाकर जीवन के वास्तविक धरातल पर लाए। उन्होंने जीवन और समाज की अनेक समसामयिक समस्याओं जैसे – पराधीनता, जमींदारों तथा सरकारी कर्मचारियों द्वारा किसानों का शोषण, निर्धनता, अशिक्षा, अंधविश्वास, दहेज की कुप्रथा, घर और समाज में नारी की स्थिति, वेश्याओं की जिन्दगी, वृद्ध–विवाह, साम्प्रदायिक वैमनस्य आदि को अपने उपन्यासों के माध्यम से उठाया।

प्रेमचन्द के समकालीन उपन्यासकारों की संख्या ढाई सौ से अधिक है। विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' (1891–1946) ने 'माँ' और 'भिखारिणी' लिखकर प्रेमचन्द का सफल अनुकरण किया। चतुरसेन शास्त्री ने आलोच्य अवधि में 'हृदय की परख' (1918), 'हृदय की प्यास' (1932), 'अमर अभिलाषा' (1932), और 'आत्मदाह' (1937) शीर्षक उपन्यासों की रचना की। प्रतापनाराण श्रीवास्तव ने 'विदा' (1929), 'विजय' (1937), नामक आदर्शवादी उपन्यास लिखे। शिवपूजन सहाय ने आंचलिक उपन्यास 'देहाती दुनिया' (1926) लिखा। प्रेमचन्द युग के ही अक्खड़ उपन्यासकार बेचन शर्मा 'उग्र' ने 'चन्द हसीनों के खुतूत' (1927), 'दिल्ली का दलाल' (1927), 'बुधुआ की बेटी' (1928), 'शराबी' (1930), उपन्यासों की रचना की। इन्होंने समाज की बुराइयों को, उसकी नंगी सच्चाई को बिना किसी लाग लपेट के साहस के साथ किन्तु सपाटबयानी के साथ प्रस्तुत किया।

उग्र के ही अनुकरण पर ऋषभचरण जैन ने वर्जित विषयों पर 'दिल्ली का कलंक', 'दिल्ली का व्यभिचार', 'वेश्यापुत्र', 'रहस्यमयी', आदि उपन्यास लिखे। इस प्रकार अनूपलाल मण्डल ने पत्रात्मक प्रविधि में 'समाज की वेदी पर' और 'रूपरेखा' नामक उपन्यास लिखे। प्रेमचन्द के समकालीन उपन्यासकारों में जयशंकर प्रसाद भी उल्लेखनीय हैं। इन्होंने 'कंकाल' (1929) और 'तितली'(1934) उपन्यासों की रचना की। 'कंकाल' विशेष उल्लेखनीय है।

हिंदी उपन्यास को प्रेमचन्द–युग (छायावाद काल) में ही नई दिशा देने का सफल प्रयास जैनेन्द्र (1905–1988) ने किया। इन्होंने 'परख' (1929), 'सुनीता' (1935) और 'त्यागपत्र' (1937) उपन्यासों में व्यापक सामाजिक जीवन को विषय न बनाकर व्यक्ति मन की शंकाओं, उलझनों और गुत्थियों का चित्रण किया है। इस काल के अन्य उपन्यासकारों में राधिकारमणप्रसाद सिंह 'राम रहीम' (1937), सियारामशरण गुप्त 'गोद' (1932), 'अन्तिम आकांक्षा' (1934) और 'नारी' (1937), भगवती प्रसाद वाजपेयी 'प्रेमपथ', 'मीठी चुटकी', 'अनाथ पत्नी', 'त्यागमयी', 'लालिमा' उल्लेखनीय हैं। वृन्दावनलाल वर्मा ने ऐतिहासिक उपन्यास लेखन परंपरा का आरंभ किया। इनके 'संगम' (1928), 'लगन' (1929), 'प्रत्यागत' (1929), 'कुण्डलीचक्र' (1932) सामाजिक उपन्यास हैं तथा 'गढ़कुंडार' (1929), 'विराटा की पद्मिनी' (1935) ऐतिहासिक उपन्यास हैं। राहुल सांकृत्यायन (1893–1963) अनूदित उपन्यास लिखे। इस काल में स्वच्छन्दतावादी पद्धति के प्रेममूलक उपन्यास लेखन का श्रेय सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' को जाता है। उन्होंने 'अप्सरा' (1931), 'अलका' (1933), 'प्रभावती'(1936), और 'निरुपमा' (1936) उपन्यासों का सृजन किया।

कहानी

आधुनिक हिंदी का विकास सही अर्थ में इसी काल में हुआ। उपन्यास सम्राट प्रेमचन्द का स्थान हिंदी कहानी के क्षेत्र में भी अद्वितीय है। प्रेमचन्द जी की कहानियाँ भी अपने आसपास की जिन्दगी से जुड़ी हुई हैं। कहानियों में प्रेमचन्द का आदर्शवादी दृष्टिकोण भी यथार्थवाद के साथ–साथ दिखाई देता है। इन्होंने लगभग 300 कहानियाँ लिखीं जिनमें प्रमुख हैं – 'बलिदान' (1918), 'आत्माराम' (1920), 'बूढ़ीकाकी' (1921), 'विचित्र होली' (1921), 'गृहदाह' (1922), 'हार की जीत' (1922), 'परीक्षा' (1923), 'आपबीती' (1923), 'उद्धार' (1924), 'सवासेर गेहूं' (1924), 'शतरंज के खिलाड़ी' (1924), 'माता का ह्रदय' (1924), 'कजाकी' (1926), 'सुजान भगत' (1927), 'इस्तीफा' (1928), 'अलग्योझा' (1929), 'पूस की रात' (1930), 'तावान' (1931), 'होली का उपहार' (1931), 'ठाकुर का कुआं' (1932), 'बेटों वाली विधवा' (1932), 'ईदगाह' (1933), 'नशा' (1934), 'बड़े भाई साहब' (1934), 'कफन' (1936) आदि।

इस काल के दूसरे प्रमुख कहानीकार जयशंकर प्रसाद हैं। इनकी प्रथम कहानी 'ग्राम' (1911) 'इन्दु' में छपी। उनकी कहानियों में जीवन के सामान्य यथार्थ को कम और स्वर्णिम अतीत के गौरव को अधिक स्थान मिला है। 'प्रतिध्वनि' (1926), 'आकाशदीप' (1929), 'आंधी' (1931), 'इन्द्रजाल' (1936) इनके कहानी संग्रह है। 'आकाशदीप', 'पुरस्कार', 'मधुवा', 'गुण्डा', 'सालवती', 'इन्द्रजाल', इनकी उल्लेखनीय कहानियाँ हैं।

अन्य कहानीकारों में विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' और सुदर्शन प्रेमचन्द परंपरा के कहानीकार माने जाते हैं। 'गल्पमन्दिर', 'चित्रशाला' (दो भाग), 'मणिमाला', 'कल्लोल' आदि उनके कहानी संग्रह हैं जिनमें दौ सौ से अधिक कहानियाँ संगृहीत हैं। सुदर्शन के कहानी संग्रहों में 'सुदर्शन सुधा', 'सुदर्शन–सुमन', 'तीर्थयात्रा', 'पुष्पलता', 'गल्पमंजरी', 'सुप्रभात', 'परिवर्तन', 'पनघट' आदि उल्लेखनीय हैं।

आचार्य चतुरसेन शास्त्री, रायकृष्णदास, विनोदशंकर व्यास ने प्रसाद जी की कथा–लेखन शैली को अपनाया। उन्होंने 'दुखवा मैं कासो कहूं मोरी सजनी', 'अंबपालिका', 'प्रबुद्ध', 'भिक्षुराज', 'बावर्चिन', 'हल्दीघाटी में', 'बाणवधू' आदि कहानियाँ लिखीं। रायकृष्णदास ने 'अन्तःपुर का आरम्भ' और 'रमणो का रहस्य' कहानियाँ लिखीं। विनोदशंकर व्यास ने 'कल्पनाओं का राजा', 'विधाता', 'अपराध' आदि कहानियाँ लिखीं।

इस काल के पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', जैनेन्द्र, अज्ञेय का भी नई कहानीधारा को जन्म दिया। 'उग्र' की कहानियों में सामाजिक विद्रूपताओं के प्रति आक्रोश उग्र रूप में मिलता है, अतः इनकी कहानियों में भावुकता कम है। 'चिनगारियाँ' (1923), 'शैतान मंडली' (1924), 'इन्द्रधनुष' (1927), 'बलात्कार' (1927), 'चाकलेट' (1928), 'दोजख की आग' (1929), 'निर्लज्जा' (1929) इनके कहानी संग्रह हैं। प्रेमचन्द के बाद हिंदी कहानी को नया आयाम देने वालों में जैनेन्द्र प्रमुख हैं। उन्होंने प्रेमचन्द के निकट रहने पर भी उनका अनुकरण नहीं किया वरन् अपने लिए नई दिशा खोजी। उन्होंने कहानी को 'घटना' के स्तर से उठाकर 'चरित्र' और 'मनोवैज्ञानिक सत्य' पर लाने का प्रयास किया। उनकी 'हत्या' (1927), 'खेल', 'अपना अपना भाग्य', 'बाहुबली', 'वातायन', 'नीलम देश की राजकन्या', 'दो चिड़िया', 'ध्रुवयात्रा', 'पाजेब', 'एक दिन' आदि प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

अज्ञेय (1911–1987) का स्थान जैनेन्द्र के समान ही महत्त्वपूर्ण है। जैनेन्द्र जहाँ मनःसंसार में रमे रहते थे वहीं अज्ञेय के पात्र बहिमुर्खी हैं जो समाज तथा आसपास की परिस्थितियों से जूझने के लिए सदैव प्रस्तुत रहते हैं। भारतीय समाज की रूढ़िप्रियता, शोषण, वर्तमान विश्व में व्याप्त संघर्ष आदि को लेकर उन्होंने अनेक कहानियाँ लिखी हैं। उनकी प्रथम कहानी संग्रह 'त्रिपथगा' (1931) है। इसी प्रकार 'कड़ियाँ', 'अमर वल्लरी', 'मैना', 'सिगनेलर', 'रेल की सीटी', 'रोज', 'हरसिंगार', आदि प्रसिद्ध कहानियाँ हैं।

इस युग के अन्य कहानीकारों में राधिकारमणप्रसाद सिंह, भगवतीप्रसाद वाजपेयी, निराला, पंत, राहुल सांकृत्यायन, सुभद्राकुमारी चौहान, शिवरानी देवी, उषादेवी मित्रा, चन्द्रगुप्त विद्यालंकार, विष्णुप्रभाकर आदि उल्लेखनीय हैं। राधिकारमण सिंह ने 'कानों में कंगना' लिख कर प्रसिद्धि प्राप्त की। इनका कहानी संग्रह 'गाँधी टोपी' (1938) है। भगवतीप्रसाद वाजपेयी की 'मधुपर्क', 'दीपमालिका', 'हिलोर', 'मिठाईवाला', 'ह्रदगति', 'तारा', 'स्वप्नमयी', 'शबनम' आदि कहानियाँ उल्लेखनीय हैं। भगवतीचरण वर्मा की कहानियाँ 'इन्स्टालमेन्ट'(1936) में संगृहीत हैं। निराला ने 'श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी', 'पद्मा', 'लिली' तो पंत जी ने 'पानवाला' नामक कहानी लिखी।

राहुल सांकृत्यायन का कहानी संग्रह 'सतमी के बच्चे' (1935) है। नारी लेखिकाओं में सुभद्राकुमारी चौहान की कहानियाँ सामाजिक–पारिवारिक जीवन के व्यावहारिक चित्रण के लिए

विशेष प्रसिद्ध हैं। 'बिखरे मोती' (1932), और 'उन्मादिनी' (1934) इनके कहानी संग्रह हैं। शिवरानी देवी का कहानी संग्रह 'कौमुदी' (1937) है। उषादेवी मित्रा की भावुकताभरी कहानियाँ 1933 ई. के आसपास प्रकाशित हुईं। इनमें 'पिउ कहाँ', 'मूर्त्त मृदंग', 'गोधूलि', 'देवदासी', 'मन का मोह' आदि प्रमुख हैं।चन्द्रगुप्त विद्यालंकार की कहानियाँ 'गोरा', 'बचपन', 'सन्देह', 'आँसू', 'शराबी', 'भय का राज्य', 'पगली', 'ताड़ का पत्ता', 'मास्टर जी' विशेष उल्लेखनीय हैं।

निबंध

इस युग के सबसे प्रमुख निबंधकार आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हैं। इनके निबंध 'चिन्तामणि' के दो खण्डों में संकलित हैं। प्रथम भाग में तीन प्रकार के निबंध हैं – मनोविकार विषयक, साहित्य–सिद्धांत विषयक और साहित्यालोचन विषयक। मनोविकार संबंधी निबंधों में आचार्य जी ने अत्यंत गंभीर मुद्रा में उत्साह, श्रद्धा, भक्ति, करुणा, लज्जा, ग्लानि, लोभ, प्रीति, ईर्ष्या, भय आदि भावों का विश्लेषण किया है। शुक्लजी का विशद पाण्डित्य, प्रौढ़ चिन्तन, सूक्ष्म विश्लेषण, व्यापक अनुभव सब कुछ अपने उत्कर्ष पर पहुँचा दिखाई देता है। इनके निबंधों में प्रांजल साहित्यिक भाषा का प्रयोग द्रष्टव्य है।

ललित निबंध की दृष्टि से गुलाबराय (1888–1963) की कुछ रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। 'ठलुआ–क्लब', 'फिर निराशा क्यों', 'मेरी असफलताएँ' आदि संग्रहों में कुछ श्रेष्ठ व्यक्तिगत निबंध संकलित हैं। 'मेरा मकान', 'मेरे नापिताचार्य', 'मेरी दैनिकी का एक पृष्ठ', 'प्रीतिभोज' आदि निबंध ललित निबंध की सभी विशेषताओं से युक्त हैं। पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी ने भी कतिपय व्यक्तिगत निबंध लिखे, जो 'पंचपात्र' में संगृहीत हैं। इसमें संकलित 'अतीत स्मृति', 'उत्सव', 'रामलाल पण्डित', 'श्रद्धांजलि के दो फूल' आदि निबंधों में लेखक की भावुकता, आत्मीयता तथा व्यंग्यपूर्ण प्रतिक्रिया का सुन्दर समन्वय मिलता है। अन्य ललित निबंधकारों में शान्तिप्रिय द्विवेदी, शिवपूजन सहाय, बेचन शर्मा 'उग्र', रघुवीरसिंह और माखनलाल चतुर्वेदी के नाम लिए जा सकते हैं।

समालोचना

इस काल में समालोचना का साहित्य एक नवीन कलेवर ग्रहण करता है। इस काल के समालोचना साहित्य का परिष्कार और परिमार्जन करने का श्रेय आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी को ही जाता है। इनकी पहली सैद्धांतिक आलोचना कृति 'काव्य में रहस्यवाद' इसी युग में प्रकाशित हुई। शुक्ल जी ने भारतीय और पाश्चात्य साहित्यशास्त्र का गंभीर अध्ययन किया। उन्होंने हिंदी में पहली बार अपने ग्रंथ 'रस–मीमांसा' में रस–विवेचन को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया। इस काल में सैद्धांतिक आलोचकों में लक्ष्मीनारायण 'सुधांशु' भी उल्लेखनीय हैं। 'काव्य में अभिव्यंजनावाद' उनका आलोचना ग्रंथ है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने भी 'आलोचनादर्श' और 'साहित्य समालोचना' (1930) समालोचनाएँ लिखीं।

इस काल में संस्कृत–काव्यशास्त्र का परिचय देने के लिए सिद्धांत या लक्षण ग्रंथों की रचना प्रचुर मात्रा की गई। इनमें जगन्नाथप्रसाद 'भानु' (रस रत्नाकर1919, अलंकार–दर्पण 1936), गुलाबराय (नवरस–1921), विश्वनाथ प्रसाद मिश्र (काव्यांग कौमुदी–1924), भगवानदीन (व्यंग्यार्थ

मंजूषा–1927), रामशंकर शुक्ल 'रसाल' (अलंकार पीयूष–1929, निर्णय–1930), श्यामसुन्दरदास (रूपक रहस्य–1932) प्रमुख हैं। प्रायोगिक आलोचना के क्षेत्र में पद्मसिंह शर्मा (बिहारी सतसई की भूमिका), कृष्णबिहारी मिश्र (देव और बिहारी), और भगवानदीन (बिहारी और देव) प्रमुख हैं।

इस काल के समालोचना साहित्य को सबसे महत्त्वपूर्ण देन शुक्ल जी की ही है। उन्होंने अपने विवेचन के लिए हिंदी के तीन बड़े कवियों गोस्वामी तुलसीदास, सूरदास और जायसी को चुना। सर्वप्रथम उन्होंने 'तुलसी ग्रंथावली' (1923) का संपादन किया। इसीकी भूमिका बाद में 'गोस्वामी तुलसीदास' (1933) शीर्षक से स्वतंत्र रूप से प्रकाशित हुई। इस प्रकार 'जायसी–ग्रंथावली' (1924) और 'भ्रमरगीतसार' (1926) का संपादन भी उन्होंने किया। 'हिन्दी–साहित्य का इतिहास' (1929) उनके गंभीर अध्ययन और विश्लेषण और सामर्थ्य का अन्य प्रमाण है।

शुक्ल जी के समान ही 'कृष्णशंकर' शुक्ल ने 'केशव की काव्य–कला' (1934) और 'कविवर रत्नाकर' (1935) समालोचनाएँ लिखीं। इसी कड़ी में विश्वनाथ प्रसाद मिश्र भी उल्लेखनीय हैं। 'बिहारी की वाग्विभूति' (1936) और 'हिंदी नाट्यसाहित्य का विकास' (1930) उनकी समालोचनाएँ हैं।

इसी मध्य छायावाद पर बहुत आलोचनाएँ लिखी गईं। यहाँ छायावाद को लेकर दो मत हो गए। छायावाद के समर्थन में नन्ददुलारे वाजपेयी, अवध उपाध्याय, कृष्णदेव प्रसाद गौड़, शान्तिप्रिय द्विवेदी, नगेन्द्र, सुमित्रानंनद पंत, जयशंकर प्रसाद आदि हैं। प्रसाद ने 'काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध' (1939) तथा महादेवी वर्मा ने 'सान्ध्यगीत' (1936) की भूमिका में छायावाद को महत्त्व दिया। छायावाद के समर्थ आलोचक नन्ददुलारे वाजपेयी जी हैं। उन्होंने 'प्रसाद', 'निराला' और 'पंत' पर 1931 ई. में पृथक–पृथक तीन निबन्ध लिखकर छायावाद की बृहत् त्रयी की घोषणा की। शांतिप्रिय द्विवेदी जी ने 'हमारे साहित्य निर्माता' (1932), 'कवि और काव्य' (1936) तथा 'साहित्यिकी' (1938) तीन आलोचना ग्रंथ लिखे। नगेन्द्र जी ने 'सुमित्रानन्दन पन्त' (1938) नामक पुस्तक लिखी।

जीवनी

आलोच्य युग में जीवनी लेखन की दिशा में पर्याप्त कार्य हुआ। इस समय राष्ट्रीय नेताओं पर जीवनियाँ लिखी गईं। इनमें नवजादिकलाल श्रीवास्तव ने 'देशभक्त लाला लाजपतराय' (1920), ईश्वरीप्रसाद शर्मा 'बालगंगाधर तिलक' (1920), रामदयाल तिवारी 'गाँधी मीमांसा' (1921), रामनरेश त्रिपाठी 'गाँधी जी कौन हैं' (1921), नरोत्तमदास व्यास 'गांधी गौरव' (1921), डॉ. राजेन्द्र प्रसाद 'चंपारन में महात्मा गांधी' (1922), मन्मथनाथ गुप्त 'चन्द्रशेखर आजाद' (1938) प्रमुख हैं।

इस काल में भारतीय इतिहास के महापुरुषों एवं महिलाओं से संबंधित जीवनियाँ भी लिखी गईं। इनमें रामनरेश त्रिपाठी 'पृथ्वीराज चौहान' (1919), रामवृक्ष शर्मा 'शिवाजी' (1925), गौरीशंकर हीराचन्द ओझा 'महाराणा प्रतापसिंह' (1927), शिवव्रतलाल वर्मन 'सच्ची देवियाँ' (1921), मनोरमाबाई 'विद्योत्तमा' (1924) आदि प्रमुख हैं।

आत्मकथा

अपनी जीवनी लिखना 'आत्मकथा' है। हिंदी में इस विधा का आरंभ बनारसीदास जैन ने 'अर्धकथानक' (1914) से किया। ये पद्यात्मक रचना थी। गद्य में सत्यानन्द अग्निहोत्री ने 'मुझमें देव–जीवन का विकास' (1910), स्वामी दयानन्द 'जीवन–चरित्र' (1917) आत्मकथा लिखी। छायावाद युग में भाई परमानन्द ने 'आपबीती' (1921), मोहनदास करमचंद गाँधी ने 'आत्मकथा' (1923), नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने 'तरुण के स्वप्न' (1935) उल्लेखनीय आत्मकथाएँ लिखीं।

यात्रावृत्त

छायावाद युग में यात्रवृत्त भी खूब लिखे गए। श्री रामनारायण मिश्र (समय 1876–1953), गणेशनारायण सोमानी (जन्म 1878), स्वामी सत्यदेव परिव्राजक (जन्म 1879), कन्हैयालाल मिश्र आर्योपदेशक (जन्म 1880), शिवप्रसाद गुप्त (जन्म 1883), राहुल सांकृत्यायन (जन्म 1893), सेठ गोविन्ददास (1896) आदि ने इस विधा को खूब समृद्ध किया। रामनारायण मिश्र ने 'यूरोप यात्रा में छह मास' (1932), गणेशनारायण सोमानी 'मेरी यूरोप–यात्रा' (1932) (इनके यात्रावृत्तांत पत्रात्मक शैली में हैं जो उन्होंने अपनी बेटी को लिखे थे), कन्हैयालाल मिश्र 'आर्योपदेशक' ने 'हमारी जापान यात्रा' (1931), शिवप्रसाद गुप्त ने 'पृथ्वी–प्रदक्षिणा'(1934) यात्रावृत्त लिखे। इनमें सत्यदेव परिव्राजक तथा राहुल सांकृत्यायन इस युग के प्रमुख यात्रावृत्तांत लेखक है। सत्यदेव ने 'मेरी जर्मन यात्रा' (1926), 'यात्री मित्र' (1936), 'यूरोप की सुखद स्मृतियाँ' (1937), 'ज्ञान के उद्यान में' (1937), 'नई दुनिया के मेरे अद्‌भुत संस्मरण' (1937) और 'अमरीका प्रवास की मेरी अद्‌भुत कहानी' (1937) नामक यात्रावृत्त लिखे। राहुल सांकृत्यायन ने 'तिब्बत में सवा वर्ष' (1933), 'मेरी यूरोप–यात्रा' (1935) तथा 'मेरी तिब्बत यात्रा' (1937) शीर्षक ग्रंथों की रचना की।

संस्मरण तथा रेखाचित्र

इस युग में संस्मरण एवं रेखाचित्र भी पर्याप्त मात्रा में लिखे गए। 'सरस्वती' में रामकुमार खेमका, कृपानाथ मिश्र, रामनारायण मिश्र, भगवानदीन दुबे, रामेश्वरी नेहरू, श्रीमन्नारायण अग्रवाल के संस्मरण प्रकाशित हुए। आचार्य रामदेव ने स्वामी श्रद्धानन्द, अमृतलाल चक्रवर्ती ने बालमुकुन्द गुप्त, बनारसीदास चतुर्वेदी ने श्रीधर पाठक पर संस्मरण लिखे। 'सुधा' (1921) में प्रकाशित इलाचन्द्र जोशी कृत 'मेरे प्राथमिक जीवन की स्मृतियाँ' तथा वृन्दावनलाल वर्मा कृत 'कुछ संस्मरण' भी उल्लेखनीय हैं।

इस युग में संस्मरणात्मक रेखाचित्रों की एक नई विधा का भी प्रचलन हुआ। जिसके विकास में श्रीराम शर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी तथा महादेवी वर्मा ने महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। श्रीराम शर्मा कृत 'बोलती प्रतिमा' (1937) विशेष उल्लेखनीय है। महादेवी जी के संस्मरणात्मक रेखाचित्रों में 'रामा' (1930), 'बिन्दा' (1934), 'सबिया' (1935), 'बिट्‌टो' (1935), 'घीसा' (1936) आदि प्रमुख हैं। चतुर्वेदी जी ने संतों, समाजसेवियों, देशसेवकों और साहित्यकारों से संबंधित अनेक संस्मरणात्मक रेखाचित्र लिखे।

छायावादोत्तर काल (1936 से)

इस बीच का साहित्य कई वादों और धाराओं से होकर गुजरा है। विभिन्न प्रकार की जीवन दृष्टियाँ, काव्य की वस्तु और शिल्प संबंधी मान्यताएँ उभरी हैं। इस समय के साहित्य में

व्यक्तिगत अनुभूति की गहनता, सामाजिक अनुभूति की स्फीति, रोमानी दृष्टि, बौद्धिक यथार्थवादी आदि दृष्टियाँ विकसित हुईं। इस समय काव्य की अग्रलिखित धाराएँ मुख्य रूप से उभरीं जिनमें राष्ट्रीय–सांस्कृतिक कविता, उत्तर छायावाद, वैयक्तिक गीतिकाव्य, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद और नयी कविता धारा प्रमुख हैं।

राष्ट्रीय–सांस्कृतिक काव्य धारा की प्रमुख कृतियों में 'नहुष', 'कुणालगीत', 'अजित', 'जयभारत'(मैथिलीशरण गुप्त), 'माता', 'समर्पण', 'युगचरण', (माखनलाल चतुर्वेदी), 'अपलक', 'क्वासि', 'विनोबा–स्तवन', 'हम विषपायी जनम के' (बालकृष्ण शर्मा 'नवीन'); 'नकुल', 'नोआखाली', 'जयहिन्द', 'आत्मोत्सर्ग', 'उन्मुक्त', 'गोपिका' (सियारामशरण गुप्त); 'हुंकार', 'कुरुक्षेत्र', 'द्वन्द्वगीत', 'इतिहास के आंसू', 'रश्मिरथी', 'धूप और धुआं', 'दिल्ली' (दिनकर); 'वासवदत्ता', 'भैरवी', 'कुणाल', 'चित्रा', 'युगाधार' (सोहनलाल द्विवेदी); 'सूत की माला' (बच्चन); 'हल्दीघाटी', 'जौहर' (श्यामनारायण पाण्डेय); 'विक्रमादित्य' (गुरुभक्तसिंह 'भक्त'); 'विसर्जन', 'मानसी', 'अमृत और विष', 'युगदीप', 'यथार्थ और कल्पना', 'एकला चलो रे', 'विजयपथ' (उदयशंकर भट्ट); 'कालदहन', 'तप्तगृह', 'कैकयी', 'दानवीर कर्ण' (केदारनाथ मिश्र प्रभात) प्रमुख हैं।

उत्तर छायावाद के प्रमुख कवि एवं रचनाएँ हैं – 'तुलसीदास', 'अणिमा', 'अर्चना', 'आराधना' (निराला); 'स्वर्णकिरण', 'स्वर्णधूलि', 'मधुज्वाल', 'युगपथ', 'उत्तरा', 'रजतशिखर', 'शिल्पी', 'अतिमा', 'कला और बूढ़ा चाँद', 'लोकायतन' (सुमित्रानन्दन पन्त); 'दीपशिखा' (महादेवी वर्मा); 'रूप अरूप', 'शिप्रा', 'मेघगीत', 'अवन्तिका' (जानकीवल्लभ शास्त्री)।

वैयक्तिक प्रगीत कविता में रोमानी धारा की कविताएँ आती हैं। इस प्रवृत्ति के अन्तर्गत आने वाली प्रमुख कविताएँ हैं – 'निशा निमंत्रण', 'आकुल अन्तर', 'सतरंगिनी', 'मिलन यामिनी' (हरिवंशराय बच्चन); 'रसवन्ती' (दिनकर); 'प्रभातफेरी', 'प्रवासी के गीत', 'पलाशवन', 'मिट्टी और फूल', 'कदलीवन' (नरेन्द्र वर्मा); 'मधूलिका', 'अपराजिता', 'किरणवेला', 'लाल चूनर' (रामेश्वर शुक्ल अंचल); 'कलापी', 'संचयिता', 'जीवन और यौवन', 'पांचजन्य' (आर.सी.प्रसाद सिंह); 'रूपरश्मि', 'छायालोक', 'उदयाचल', 'मन्वन्तर', 'दिवालोक'(शम्भुनाथ सिंह); 'पंछी', 'पंचमी', 'रागिनी', 'नवीन' (गोपालसिंह नेपाली), 'नींद के बादल' (केदारनाथ अग्रवाल); 'मंजीर' (गिरिजाकुमार माथुर); 'छवि के बन्धन' (भारतभूषण अग्रवाल)। इसके पश्चात् प्रगतिवादी धारा प्रमुख रूप से विकसित हुई।

प्रगतिवाद

जो काव्य मार्क्सवादी दर्शन को सामाजिक चेतना और भावबोध को अपना लक्ष्य बनाकर चला उसे प्रगतिवाद कहा गया। इसके विकास में राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियाँ तो सहायक हुईं साथ ही छायावाद की वायवी काव्यधारा भी इसमें सहायक सिद्ध हुई। उस समय राजनीतिक दासता देश में एक ओर पूंजीवाद और सामन्तवाद की शोषक शक्तियाँ अपना जाल फैला रही थीं, दूसरी ओर जन–सामान्य के लिए अपार भयावह गरीबी, अशिक्षा, असुविधा और अपमान की सृष्टि कर रही थीं। युद्ध के दबाव में जनता और भी आक्रांत हो रही थी। जगती हुई उग्र जन–चेतना, रूस में स्थापित समाजवाद तथा पश्चिम के अन्य देशों में प्रचारित साम्यवाद के कारण भारत में 1935 ई. के आस–पास साम्यवादी आन्दोलन उठने लगा। सन् 1935 ई. में एम.

फार्स्टर के सभापतित्व में पेरिस में 'प्रोगेसिव राइटर्स एसोसियेशन' नामक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था का प्रथम अधिवेशन हुआ। भारत में भी 1936 ई. में इस संस्था की एक शाखा खुली और प्रेमचंद की अध्यक्षता में लखनऊ में प्रथम अधिवेशन हुआ।

प्रगतिवाद के प्रमुख कवि और रचनाएँ इस प्रकार हैं – 'युगवाणी', 'ग्राम्या' (पंत), 'कुकुरमुत्ता' (निराला), 'युग की गंगा' (केदारनाथ अग्रवाल), 'युगधारा' (नागार्जुन), 'धरती' (त्रिलोचन), 'जीवन के गान', 'प्रलय सृजन' (शिवमंगलसिंह सुमन), 'अजेय खंडहर', 'पिघलते पत्थर', 'मेधावी' (रांघेय राघव), 'मुक्तिमार्ग', 'जागते रहो' (भारतभूषण अग्रवाल)।

निराला के गीत छायावाद से अलग न हटकर उसकी सम्भावनाओं से निर्मित हैं। उनमें एक बहुत बड़ी शक्ति का विकास होता है, वह है –लोकोन्मुखता। निराला जी व्यक्तिगत प्रणय के ही गीत न गाकर लोक–जीवन के सुख–दुःख को, यातना और संघर्ष को गहराई से उभारते हैं। निराला जी ने छायावाद से एकदम हटकर प्रगतिशील कविताएँ लिखीं तथा छायावादी कविताओं से हटकर लोकपरक कविताएँ लिखीं। इनकी प्रगतिवादी कविताओं में 'कुकुरमुत्ता', 'गर्म पकौड़ी', 'प्रेम–संगीत', 'रानी और कानी', 'खजोहरा', 'मास्को डायलाग्य', 'स्फटिक शिला', और 'नये पत्ते' प्रमुख है। सुमित्रानन्दन पंत ने सन् 1936 ई. में 'युगान्त' की घोषणा कर 1939 ई. में 'युगवाणी' और सन् 1940 में 'ग्राम्या' लिखी। पंत ने मार्क्सवादी दर्शन को चिन्तन के स्तर पर स्वीकार किया।

केदारनाथ अग्रवाल का जन्म 9 जुलाई सन् 1911 को कमासिन, जिला बांदा में हुआ। ये प्रगतिवादी वर्ग के सशक्त कवि हैं। 'माझी न बजाओ वंशी', 'बसन्ती हवा' आदि प्रतिनिधि कविताएँ 'फूल नहीं रंग बोलते हैं' में संगृहीत हैं। रामविलास शर्मा का जन्म 1912 में झांसी में हुआ। ये प्रख्यात प्रगतिवादी समीक्षक हैं। ये प्रगतिशील लेखक संघ के मंत्री तथा 'हंस' के सम्पादक भी रहे। नागार्जुन का वास्तविक नाम वैद्यनाथ मिश्र है। इनका जन्म 1910 में तरौनी (दरभंगा) में हुआ था। 'बादल को घिरते देखा', 'पाषाणी', 'चन्दना', 'रवीन्द्र के प्रति', 'सिन्दूर तिलकित भाल', 'तुम्हारी दंतुरित मुस्कान' आदि कविताएँ इनकी उत्तम प्रगतिवादी कविताएँ हैं।

रांघेय राघव बहुमुखी प्रतिभा के प्रगतिवादी कवि हैं। 'अजेय खंडहर', 'मेधावी' और 'पांचाली' उनकी प्रबंधात्मक कृतियाँ हैं। रांघेय राघव की कविताओं में समाजवादी चिन्तन और उससे अनुप्राणित सामाजिक संवेदना की शक्ति है। अन्य प्रमुख कवियों में शिवमंगलसिंह सुमन (1915), त्रिलोचन (1917), मुक्तिबोध, अज्ञेय, भारतभूषण अग्रवाल, भवानीप्रसाद मिश्र, नरेश मेहता, शमशेर बहादुर सिंह, धर्मवीर भारती आदि हैं।

प्रयोगवाद और नई कविता–

हिंदी काव्य में 'प्रयोगवाद' का प्रारंभ सन् 1943 में अज्ञेय द्वारा संपादित 'तार सप्तक' के प्रकाशन से माना जाता है। जो कविताएँ नए बोध, संवेदनाओं तथा शिल्पगत चमत्कारों के साथ सामने आई उन कविताओं के लिए 'प्रयोगवाद' शब्द रूढ़ हो गया। वैसे 'प्रयोगवाद' शब्द भ्रामक है। इससे यह आशय कदापि नहीं निकलता कि कविताओं में नए–नए प्रयोग करना ही कवियों का प्रमुख उद्देश्य है। अज्ञेय जी ने प्रयोगवाद को स्पष्ट करते हुए कहा है –''प्रयोग अपने आप में इष्ट

नहीं है, वरन् वह साधन है; दोहरा साधन है। एक तो वह उस सत्य को जानने का साधन है जिसे कवि प्रेषित करता है....दूसरे वह उस प्रेषण–क्रिया को और उसके साधनों को जानने का साधन है।'' इस समय के कवियों के दृष्टिकोण और कथ्य एक ही प्रकार के नहीं हैं। प्रयोगवादी कविताओं में ह्रासोन्मुख मध्यवर्गीय समाज के जीवन का चित्रण है।

प्रथम 'तार सप्तक' (1943) के 7 कवि नेमिचन्द जैन, गजानन माधव मुक्तिबोध, भारतभूषण अग्रवाल, प्रभाकर माचवे, गिरिजा कुमार माथुर, रामविलास शर्मा तथा अज्ञेय हैं।

द्वितीय 'तार सप्तक' (1951) के 7 कवि भवानीप्रसाद मिश्र, शकुन्तला माथुर, हरिनारायण व्यास, शमशेर बहादुर सिंह, नरेश मेहता, रघुवीर सहाय और धर्मवीर भारती हैं।

अज्ञेय के सम्पादकत्व में ही तीसरा 'तार सप्तक' (1959) निकला, जिसके कवि हैं – प्रयागनारायण त्रिपाठी, कुंवर नारायण, कीर्ति चौधरी, केदारनाथ सिंह, मदन वात्स्यायन, विजयदेव नारायण साही, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना।

प्रयोगवादी कवि यथार्थवादी हैं। वे भावुकता के स्थान पर ठोस बौद्धिकता को स्वीकार करते हैं। वे कवि मध्यवर्गीय व्यक्ति के जीवन की समस्त जड़ता, कुण्ठा, अनास्था, पराजय और मानसिक संघर्ष के सत्य को बड़ी बौद्धिकता के साथ उद्‌घाटित करते हैं। छायावादी कवियों की तुलना में प्रयोगवादी धारा के कवियों ने दमित यौन–वासना के नग्न रूप को प्रस्तुत किया। लघुमानव को उसकी समस्त हीनता और महत्ता के संदर्भ में प्रस्तुत करके प्रयोगवादी कविता ने उसके प्रति सहानुभूतिपूर्ण दृष्टि से सोचने के लिए एक नया रास्ता खोला।

नई कविता

प्रयोगवाद का विकास ही कालान्तर में 'नई कविता' के रूप में हुआ। वस्तुतः प्रयोगवाद और नई कविता में कोई सीमा रेखा नहीं खींची जा सकती। बहुत से कवि जो पहले प्रयोगवादी रहे, बाद में नई कविता के प्रमुख हस्ताक्षर बन गए। इस प्रकार ये दोनों एक ही काव्यधारा के विकास की दो अवस्थाएँ हैं। सन् 1943 ई. से 1953 ई. तक की कविताओं में जो नवीन प्रयोग हुए, नई कविता उन्हीं का परिणाम है। 1943 से 1953 तक की कविता को प्रयोगवादी एवं 1953 के बाद की कविता को नई कविता की संज्ञा दी जा सकती है।

नई कविता की पहली विशेषता जीवन के प्रति उसकी आस्था है। इन कविताओं में आज की क्षणवादी और लघु–मानववादी दृष्टि जीवन–मूल्यों के प्रति नकारात्मक नहीं, सकारात्मक स्वीकृति है। नई कविता में जीवन को पूर्णरूप से स्वीकार करके उसे भोगने की लालसा दिखाई देती है। अनुभूति की सच्चाई नई कविता में दिखाई देती है। समाज की अनुभूति कवि की अनुभूति बनकर ही कविता में व्यक्त हुई है। नई कविता जीवन के एक–एक क्षण को सत्य मानती है और उस सत्य को पूरी हार्दिकता और पूरी चेतना से भोगने का समर्थन करती है। नई कविता में जीवन–मूल्यों की फिर से नए दृष्टिकोण से व्याख्या की गई है। नई कविता में व्यंग्य के रूप में पुराने मूल्यों को अस्वीकार किया गया है। लोक–सम्पृक्ति नई कविता की खास विशेषता है। वह सहज लोक–जीवन के करीब पहुँचने का प्रयत्न करती है। कुल मिलाकर नई कविता में नवीनता,

बौद्धिकता, अतिशय वैयक्तिकता, क्षणवादिता, भोग एवं वासना, यथार्थवादिता, आधुनिक युग बोध, प्रणयानुभूति, लोक संस्कृति, नया शिल्प विधान आदि विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं।

प्रयोगवाद एवं नई कविता के प्रमुख कवि

अज्ञेय – सच्चिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन 'अज्ञेय' का जन्म (1911–1987) कसया (देवरिया) में हुआ। इनका जीवन यायावरी और क्रांतिकारी रहा। उन्होंने 'दिनमान' ओर 'प्रतीक' का कुशलतापूर्वक संपादन किया। 'तार सप्तक', 'दूसरा सप्तक', 'तीसरा सप्तक' और 'रूपाम्बरा' इनके द्वारा संपादित काव्य संकलन हैं। इनकी काव्य कृतियाँ हैं – हरी घास पर क्षण भर, बावरा अहेरी, इन्द्रधनुष रौंदे हुए ये, अरी ओ करुणा प्रभामय, आंगन के पार द्वार, कितनी नावों में कितनी बार, सागर मुद्रा, महावृक्ष के नीचे, क्योंकि मैं उसे जानता हूँ, नदी की बांक पर छाया, असाध्य वीणा, इत्यलम।

गिरिजाकुमार माथुर – इनका जन्म मध्यप्रदेश में सन् 1919 में हुआ। माथुर में प्रयोग और संवेदना का बहुत सुंदर सामंजस्य है। कवि ने छन्द, भाषा और बिम्ब–विधान सभी में प्रयोग किए हैं। इनकी काव्य कृतियाँ हैं – मंजीर, नाश और निर्माण, धूप के धान, साक्षी रहे वर्तमान, भीतरी नदी की यात्रा, शिलापंख चमकीले, छाया मत छूना मन, पृथ्वीकल्प, कल्पांतर। 'तार सप्तक' में व्यक्तिगत अनुभूतियाँ हैं तो 'नाश और निर्माण', 'धूप के धान', 'शिलापंख चमकीले' में सामाजिक जीवन की अनुभूतियाँ और यथार्थ उभरते गए हैं।

गजानन माधव मुक्तिबोध – इनका (1917–1964) का जन्म ग्वालियर के एक कस्बे में हुआ था। मुक्तिबोध एक ऐसे कवि हैं जिनका अनुभव जगत बहुत व्यापक है। जीवन के विभिन्न दृष्टिकोणों को लेकर विकसित होने वाली नई कविता के अग्रज कवि सच्चे अर्थों में मुक्तिबोध ही हैं। उनकी सबसे बड़ी शक्ति है– लोक-परिवेश से गहरी सम्पृक्ति तथा जन–जीवन में विश्वास। इनकी काव्य रचनाएँ हैं – चाँद का मुँह टेढ़ा है, भूरी–भूरी खाक धूल।

भवानीप्रसाद मिश्र– (1914–1985) ये सहज संवेदना के कवि हैं। कवि की संवेदना कहीं तो बहुत सूक्ष्म और आत्मगत है, कहीं बहुत प्रत्यक्ष है। इनकी काव्य रचनाएँ हैं – कमल के फूल, वाणी की दीनता, टूटने का सुख, सतपुड़ा के जंगल, सन्नाटा, गीत फरोश, चकित है दुःख, अन्धेरी कविताएँ, गाँधी पंचशती, बुनी हुई रस्सी आदि।

शमशेर बहादुर सिंह – इनका जन्म सन् 1911 में देहरादून में हुआ। ये व्यक्तिवादी और रूमानी कवि हैं। उनकी अधिकांश कविताओं का स्वर कुण्ठित प्रेम का है। इनकी रचनाएँ हैं – दूसरा सप्तक में संकलित कविताएँ, चुका भी नहीं हूँ मैं, इतने पास अपने, काल तुझसे होड़ मेरी, बात बोलेगी हम नहीं, उदिता।

धर्मवीर भारती – इनका जन्म सन् 1926 में इलाहाबाद में हुआ। ये धर्मयुग के संपादक रहे। भारती जी में आदिम गन्ध की तड़प और लोक–जीवन की रूमानी छवि की पकड़ है। इसलिए इनकी कविताएँ गीतात्मक हैं। इनकी कविताओं में लोक–परिवेश की मस्ती और उल्लास के स्थान

पर उदासी और सूनापन ही अधिक उभरता है। इनकी काव्यकृतियाँ हैं – अन्धायुग, कनुप्रिया, सात गीत वर्ष, ठण्डा लोहा, देशान्तर।

छायावादोत्तर गद्य साहित्य

नाटक

इस काल में हिंदी नाटक रंगमंच और जीवन के यथार्थ से जुड़कर नई दिशा की ओर उन्मुख हुआ। हिंदी नाट्य लेखन का सूत्रपात भारतेन्दु कर चुके थे किन्तु भारतेन्दु के बाद प्रसाद को दिशा–निर्देशक नाटककार स्वीकार किया जाता है। प्रसाद के नाटकों के साथ समस्या यह थी कि वे रंगमंचीय नहीं थे और रोमांटिसिज़्म से बाहर नहीं निकल सके थे। वस्तुतः उपेन्द्रनाथ अश्क पहले नाटककार हैं जिन्होंने हिंदी नाटक को रोमांस के कठघरे से निकालकर किसी सीमा तक आधुनिक भावबोध के साथ जोड़ा। यद्यपि उनके 'जय–पराजय' (1937) पर प्रसाद के रोमांटिसिज़्म की छाया है किन्तु 'छठा बेटा' (1940) उस प्रभाव से मुक्त है। अश्क जी के अन्य नाटक हैं – 'कैद'(1945), 'उड़ान' (1946), 'भंवर' (1950), 'अंजो दीदी' (1954), 'अंध गली' और 'पैंतरे'।

विष्णु प्रभाकर, जगदीशचन्द्र माथुर, धर्मवीर भारती, डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल, मोहन राकेश आदि प्रमुख नाटककार हैं। विष्णु प्रभाकर का 'डॉक्टर', जगदीशचन्द्र माथुर के 'कोणार्क', 'शारदीया', 'पहला राजा' (1969) उल्लेखनीय है। आधुनिक भावबोध को रूपायित करने वाले नाटकों में धर्मवीर भारती का गीति–नाट्य 'अन्धा युग' (1955) विशेष उल्लेखनीय है। डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल ने कई नाटकों की रचना की है, जिनमें 'अन्धा कुआं' (1955), 'मादा केक्टस' (1959), 'तीन आंखों वाली मछली' (1960), 'सुन्दर रस, सूखा सरोवर (1960), 'रक्त कमल' (1962), 'रात रानी' (1962), दर्पन (1963), 'सूर्यमुख' (1968), 'मिस्टर अभिमन्यु' (1971), 'करफ्यू' (1972), 'कलंकी' आदि। मोहन राकेश गहन मानवीय त्रासदी को नाटकीय स्थितियों में रचनात्मक ढंग से आंकने वाले नाटककार हैं। उनके 'आषाढ़ का एक दिन' (1958), 'लहरों के राजहंस' (1963), और 'आधे–अधूरे' (1969) तीन नाटक हैं।

इस काल में गीति–नाट्य भी प्रचुर मात्रा में लिखे गए। 'अन्धा–युग' के बाद सुमित्रानन्दन पन्त ने 'रजतशिखर', 'शिल्पी', और 'सौवर्ण' लिखे। सेठ गोविन्ददास ने 'स्नेह या स्वर्ग' (1946), 'कर्ण' (1942), 'शशिगुप्त' (1942), 'हिंसा और अहिंसा',(1940), 'संतोष कहाँ' (1941) लिखे। गिरजाकुमार माथुर के 'कल्पान्तर', 'सृष्टि की सांझ', 'लौह देवता', 'संघर्ष', दुष्यन्तकुमार का 'एक कण्ठ विषपायी' (1963) उल्लेखनीय है।

छायावादोत्तर काल के अन्य प्रमुख नाटककार एवं नाटक हैं – लक्ष्मीनारायण मिश्र 'अपराजित', 'चक्रव्यूह', हरिकृष्ण प्रेमी 'आहुति' (1940), 'स्वप्नभंग' (1940), 'विषपान' (1945), 'सांपों की सृष्टि', 'उदार', 'अमृत पुत्री' (1972) 'बन्धन' (1940), 'छाया' (1941)। गोविन्दवल्लभ पन्त ने दो उल्लेखनीय नाटकों की रचना की 'सुहाग बिन्दी' (1940) तथा 'ययाति' (1947)। उदयशंकर भट्ट के नाटकों में बौद्धिकता, मनोविज्ञान और यथार्थपरकता है। इनके नाटक 'शक विजय' (1953), 'क्रांतिकारी' (1954), 'नया समाज' (1955), 'पार्वती' (1960) हैं। जगन्नाथ प्रसाद 'मिलिन्द' ने 'समर्पण'(1950), 'गौतम नन्द' (1952) लिखे।

छायावादोत्तर काल की अन्य नाट्यकृतियों को मोटे रूप से तीन श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है – (1)स्वतंत्र भारत में व्याप्त भ्रष्टाचार से सम्बद्ध नाटक। (2) पीढ़ीगत संघर्षों का नैतिक मूल्यों से सम्बद्ध नाटक। (3) चीनी आक्रमण से सम्बद्ध नाटक। चन्द्रगुप्त विद्यालंकार के 'न्याय की रात' और विनोद रस्तोगी के 'आजादी के बाद' तथा 'नया हाथ' प्रथम वर्ग में आते हैं। दूसरे वर्ग में नरेश मेहता के 'सुबह के घण्टे' और 'खण्डित यात्राएँ' तथा मन्नू भण्डारी के 'बिना दीवार का घर' का उल्लेख किया जा सकता है। तृतीय वर्ग में 'शिव प्रसाद सिंह' के 'घाटियां गूंजती है' और ज्ञानदेव अग्निहोत्री के 'नेफा की एक शाम' उल्लेखनीय है।

विपिन कुमार के 'तीन अपाहिज' (1963), ज्ञानदेव अग्निहोत्री के 'शुतुरमुर्ग' (1968), गिरिराज किशोर के 'नरमेघ', सुरेन्द्र वर्मा के 'द्रौपदी'(1970) और सर्वेश्वरदयाल सक्सेना के 'बकरी' नवीन आधुनिक भावबोध के नाटक हैं। इनमें वर्तमान जीवन में व्याप्त अनास्था, उद्देश्यहीनता और विसंगतियों को अत्यन्त सशक्त अभिव्यक्ति प्राप्त हुई है।

एकांकी नाटक

प्रारंभ में हिंदी एकांकी को एक स्वतंत्र विधा के रूप में नहीं माना गया किन्तु 1940 ई. के बाद इसे स्वतंत्र विधा के रूप में मान लिया गया। इस समय के प्रमुख एकांकीकार हैं –भुवनेश्वर, रामकुमार वर्मा, उदयशंकर भट्ट, अश्क, सेठ गोविन्ददास, जगदीशचन्द्र माथुर आदि। भुवनेश्वर ने 'तांबे के कीड़े', आजादी की नींव, सिकन्दर आदि एकांकी लिखे। रामकुमार वर्मा इस काल के प्रमुख एकांकीकार हैं। इनके एकांकियों का मूल स्वर आदर्शवादी है। इनके एकांकी संग्रह हैं – 'रेशमी टाई', 'चारुमित्रा', 'विभूति', 'सप्तकिरण', 'रजत रश्मि', 'दीपदान', 'ऋतुराज', 'रिमझिम', 'इन्द्रधनुष', 'पांचजन्य', 'कोमुदी महोत्सव', 'मयूर पंख', 'जूही के फूल' आदि। उदयशंकर भट्ट ने 1938 के आस–पास एकांकी लेखन आरंभ किया। भट्ट जी ने अपने एकांकियों को नवजीवन की ज्वलंत समस्याओं से जोड़ने की कोशिश की है। 'स्त्री का हृदय', 'चार एकांकी', 'समस्या का अन्त', 'धूमशिखा', 'अन्धकार और प्रकाश', 'आदिम युग', 'पर्दे के पीछे', 'आज का आदमी', 'सात प्रहसन' आदि इनके एकांकी संकलन हैं।

हिंदी एकांकीकारों में उपेन्द्रनाथ अश्क का विशिष्ट स्थान है। 'देवताओं की छाया में', 'चरवाहे', 'पक्का गाना', 'पर्दा उठओ पर्दा गिराओ', 'अन्धी गली', 'साहब को जुकाम है', 'पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी' आदि उनके एकांकी संग्रह हैं। उनके एंकाकियों के विषय पारिवारिक जीवन के विविध क्षेत्र हैं। सेठ गोविन्ददास के एकांकियों के विषय राजनीतिक–सामाजिक क्षेत्र से जुड़े हैं। वे स्वयं कुशल एवं कर्मठ राजनीतिज्ञ थे। 'सप्तरश्मि', 'एकादशी', 'पंचभूत', 'चतुष्पथ' आदि इनके एकांकी संग्रह हैं। हरिकृष्ण प्रेमी के एकांकी संग्रह हैं – 'मातृ मन्दिर', 'राष्ट्र मन्दिर', 'मान मन्दिर', 'न्याय मन्दिर', 'वाणी मन्दिर' आदि। जगदीशचन्द्र माथुर के दो एकांकी संग्रहों – 'भोर का तारा' और 'ओ मेरे सपने' में जीवन की नवीन समस्याओं को रूपायित किया गया है।

विष्णु प्रभाकर ने आदर्शवाद, सांस्कृतिक चेतना, नैतिक मूल्यों और मनोविज्ञान को दृष्टि में रखकर सामाजिक एकांकियों की रचना की है। उनके 'प्रकाश और परछाई', 'इन्सान', 'बारह एकांकी', 'क्या वह दोषी था', 'दस बजे रात', 'ऊँचा पर्वत गहरा सागर' तथा 'ये रेखाएँ ये दायरे'

एकांकी संग्रह हैं। इनके अतिरिक्त लक्ष्मीनारायण लाल, धर्मवीर भारती (नदी प्यासी थी), मोहन राकेश (अंडे के छिलके), भारतभूषण अग्रवाल, विनोद रस्तोगी, विमला लूथरा, रेवतीसरन शर्मा, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर (उमर कैद), चिरंजीत, सिद्धनाथ कुमार ने एकांकी और रेडियो एकांकी लिखे। लक्ष्मीनारायण लाल के 'ताजमहल के आंसू', 'पर्वत के पीछे', 'नाटक बहुरंगी' और 'दूसरा दरवाजा' आदि एकांकी संग्रहों में सामाजिक जीवन की यथार्थ अभिव्यक्ति, समस्याओं का सूक्ष्म समाधान और रंगमंचीय सार्थकता मिलती है।

उपन्यास

प्रेमचन्द के उपरान्त हिंदी उपन्यास कई मोड़ों से गुजरता हुआ दिखाई पड़ता है, जिन्हें स्थूल रूप से तीन दशकों में बाँटा जा सकता है – 1950 ई. तक के उपन्यास, 1950 से 1960 ई. तक के उपन्यास और साठोत्तरी उपन्यास। 1950 ई. का दशक मुख्यतः फ्रायड और मार्क्स की विचारधारा से प्रभावित है। 1960 का दशक प्रयोगात्मक विशेषताओं का है तथा 1960 के बाद आधुनिकतावादी विचारधारा से पोषित है। फ्रायड से प्रभावित उपन्यासकारों में जैनेन्द्र जी प्रमुख हैं। उनके उपन्यासों – 'कल्याणी', 'सुखदा', 'विवर्त', 'व्यतीत', 'जयवर्धन' आदि में मनोविज्ञान, दार्शनिकता, वैयक्तिकता आदि के विविध रूप उभरे हैं। उनके नारी–पात्र यदि एक ओर समाज की मर्यादाओं को बनाए रखना चाहते हैं, तो दूसरी ओर अपने अस्तित्व की पहचान भी करना चाहते है।

अज्ञेय के 'शेखर एक जीवनी' (1941) के प्रकाशन के साथ हिंदी उपन्यास की दिशा में एक नया मोड़ आया। इसके दो भाग हैं। उनका दूसरा उपन्यास 'नदी के द्वीप' (1951) है। जैनेन्द्र और अज्ञेय फ्रायड के मनोविज्ञान से प्रभावित हैं, तो इलाचन्द्र जोशी उसके मनोविश्लेषण से। इनका पहला उपन्यास 'घृणामयी' (1929) में प्रकाशित हो चुका था किंतु उन्हें प्रतिष्ठा 'सन्यासी' (1941) से मिली। इसके अतिरिक्त 'पर्दे की रानी' (1941), 'प्रेत और छाया', 'निर्वसित' (1946), 'मुक्तिपथ' (1950), 'जिप्सी', 'जहाज का पंछी' (1955), 'ऋतुचक्र', 'भूत का भविष्य' (1973) आदि उनके प्रमुख उपन्यास हैं। यशपाल ने दो ऐतिहासिक उपन्यास 'अमिता' और 'दिव्या' लिखे किन्तु इनके शेष उपन्यास समाजवादी यथार्थ का चित्र प्रस्तुत करते हैं जिनमें 'दादा कामरेड' (1941), 'देशद्रोही' (1942), 'पार्टी कामरेड' (1943), 'मनुष्य के रूप' (1949), 'झूठा सच' (दो भाग 1958–1960) हैं।

यशपाल की परंपरा के दूसरे उपन्यासकार रामेश्वरशुक्ल अंचल हैं। उन्होंने 'चढ़ती धूप' (1945), 'नयी इमारत' (1946), 'उल्का' (1947) और 'मरुप्रदीप' (1951) उपन्यास लिखे। भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, अमृतलाल नागर प्रेमचंद परंपरा के उपन्यासकार हैं। उन्होंने 'टेढ़े–मेढ़े रास्ते', 'आखिरी दांव', 'भूले–बिसरे चित्र', 'सामर्थ्य और सीमा', 'रेखा' और 'सबहिं नचावत राम गुसाईं' उपन्यास लिखे। उपेन्द्रनाथ अश्क 'गिरती दीवारें' (1947) इनका प्रसिद्ध उपन्यास है। 'शहर में घूमता आईना' और 'एक नन्ही कन्दील' इस उपन्यास के अगले खण्ड हैं। 'गर्म राख' (1952), 'बड़ी–बड़ी आंखें' (1954) तथा 'पत्थर–अल–पत्थर' (1957) इनके अन्य उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

अमृतलाल नागर का विशेष स्थान है। उन्होंने अपने उपन्यासों में व्यक्ति और समाज के सापेक्षिक संबंधों को चित्रित किया है। 'नवाबी मसनद', 'सेठ बांकेमल', 'महाकाल', 'बूँद और समुद्र', 'अमृत और विष', 'शतरंज के मोहरे', 'सुहाग के नूपुर', 'एकदा नैमिषारण्ये', और 'मानस का हंस'(1962) इनके प्रसिद्ध उपन्यास हैं।

एतिहासिक उपन्यासकारों में वृन्दावनलाल वर्मा, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी, यशपाल, राहुल सांकृत्यायन और रांघेय राघव प्रमुख हैं। वृन्दावनलाल वर्मा ने 'विराटा की पद्मिनी', 'झांसी की रानी', 'कचनार', 'मृगनयनी', 'अहिल्याबाई', 'माधोजी सिंधिया', 'भुवनविक्रम' आदि ऐतिहासिक उपन्यास लिखे। हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारुचन्द्रलेख' और 'पुनर्नवा' उपन्यास लिखे। यशपाल ने 'दिव्या', राहुल जी ने 'सिंह सेनापति' और 'जय यौधेय' और रांघेय राघव ने 'मुर्दों का टीला' मोहनजोदड़ो की सभ्यता पर लिखा। चतुरसेन शास्त्री का 'वैशाली की नगरवधू' भी उल्लेखनीय उपन्यास है।

1950 के बाद ग्रामांचल, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक चेतना के उपन्यास लिखे गए। फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास सही अर्थों में आंचलिक हैं। उनका 'मैला आंचल' (1954) विशेष प्रसिद्ध हुआ। 'मैला आंचल' और 'परती परिकथा' में ग्रामांचलों के जितने सवाक् और विशद् चित्र देखने को मिलते हैं उतने अन्य आंचलिक उपन्यासों में नहीं मिलते। नागार्जुन 'बलचनमा' (1952), 'रतिनाथ की चाची', 'नयी पौध', 'बाबा बटेसरनाथ', 'दुखमोचन', 'वरुण के बेटे' आदि उल्लेखनीय आंचलिक उपन्यास हैं। उदयशंकर भट्ट का 'सागर, लहरें और मनुष्य' (1956), रांघेयराघव का 'कब तक पुकारूं', भैरवप्रसाद गुप्त का 'सती मैया का चौरा', राही मासूम रज़ा का 'आधा गाँव', शिवप्रसाद सिंह का 'अलग–अलग वैतरणी' उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में धर्मवीर भारती का 'गुनाहों का देवता', देवराज के 'पथ की खोज', 'बाहर भीतर', 'रोड़े और पत्थर', 'अजय की डायरी', 'मैं, वे और आप' प्रमुख हैं। सामाजिक चेतना के उपन्यासों में मन्मथनाथ गुप्त, भैरवप्रसाद गुप्त, अमृतराय, लक्ष्मीनारायण लाल, राजेन्द्र यादव आदि प्रमुख हैं। मन्मथनाथ गुप्त का 'बहता पानी' (1955), भैरवप्रसाद गुप्त के 'मशाल' और 'गंगा मैया' तथा अमृतराय कृत 'बीज', 'नागफनी का देश' और 'हाथी के दाँत' लक्ष्मीनारायण लाल के 'मन वृन्दावन', 'धरती की आँखें', 'काले फूल का पौधा' और 'रूपाजीवा' तथा राजेन्द्र यादव के 'प्रेत बोलते हैं', 'उखड़े हुए लोग', 'एक इंच मुस्कान' उल्लेखनीय हैं।

आधुनिक भाव बोध के उपन्यासों में यन्त्रीकरण, दो महायुद्धों और अस्तित्ववादी चिन्तन के फलस्वरूप आधुनिकता की जो स्थिति उत्पन्न हुई है उसे लेकर भी उपन्यास लिखे गए। मोहन राकेश ने अपने उपन्यास 'अंधेरे बन्द कमरे' (1961) आस्थाविहीन समाज, अनिश्चय की स्थिति में लटके इंसान की मनःस्थिति को अभिव्यक्ति दी। निर्मल वर्मा का 'वे दिन' आधुनिक संवेदना से सम्पन्न उपन्यास है। राजकमल चौधरी का उपन्यास 'मरी हुई मछली', श्रीकान्त वर्मा का 'दूसरी बार', महेन्द्र भल्ला का 'एक पति के नोट्स', कमलेश्वर का 'डाक बंगला' और 'काली आंधी', गंगा प्रसाद विमल का 'अपने से अलग' आदि उपन्यास भी आधुनिक बोध की रचनाएँ हैं। श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी' रिपोर्ताज शैली में लिखा गया उल्लेखनीय उपन्यास है।

कहानी

कहानी एक प्रमुख विधा है। नयी कविता के सादृश्य पर 'नयी कहानी' विकसित हुई। उसके बाद सचेतन कहानी, अ–कहानी आंदोलन भी चले। 1950 के आस–पास की कहानियों में वैयक्तिकता का दबाव बढ़ता गया। प्रगतिवाद और मार्क्सवाद से हमारा मोहभंग हुआ। स्वतंत्रता प्राप्ति का उल्लास भी कहानियों में दिखा किंतु शीघ्र ही स्वतंत्रता से प्राप्त होने वाले सुख के प्रति रोमानी मोह टूट गया और व्यक्ति एक तरह के अलगाव के घेरे में खड़ा हो गया। 1962 में भारत–चीन युद्ध ने हमें रोमैंटिक छद्मावरण से यथार्थ की भूमि पर ला पटका, जिससे सातवें दशक में संत्रास, अलगाव, बेगानेपन और ऊब से संबंधित कहानियाँ सामने आईं।

यशपाल ने प्रगतिवाद के प्रेरित होकर धन की विषमता पर प्रहार किए। उनके कहानी संग्रह हैं – 'पिंजड़े की उड़ान', 'वो दुनिया', 'अभिशप्त', 'तर्क का तूफान', 'भस्मावृत चिनगारी', 'फूलों का कुर्ता', 'उत्तमी की मां', 'सच बोलने की भूल', 'तुमने क्यों कहा कि मैं सुन्दर हूँ' आदि। अज्ञेय ने मुख्यतः व्यक्ति के आत्मसंघर्ष तथा व्यक्ति और परिवेश के संघर्ष का चित्रण किया है। उनके 'विपथगा', 'परम्परा', 'कोठरी की बात', 'शरणार्थी', 'जयदोल', 'अमर वल्लरी' और 'ये तेरे प्रतिरूप' प्रसिद्ध कहानी संग्रह हैं।

इलाचन्द्र जोशी ने अपनी कहानियों में मनोवैज्ञानिक केस–हिस्ट्री पिरोयी है। इस दिशा में अग्रसर होने वाले वे अकेले कहानीकार हैं। 'खंडहर की आत्माएं', 'डायरी के नीरस पृष्ठ', 'आहुति' और 'दीवाली' उनके प्रमुख कहानी–संग्रह है। अश्क की कहानियों में विविधता के दर्शन होते हैं। विष्णुप्रभाकर, कमल जोशी, निर्गुण, भैरवप्रसाद गुप्त, अमृतराय आदि अपेक्षाकृत नई पीढ़ी के कहानीकार हैं। विष्णुप्रभाकर की 'धरती अब भी घूम रही है' कहानी नए बोध के निकट है। कमल जोशी की 'शिराजी' और 'पत्थर की आँखें' चर्चित कहानियाँ हैं।

सन् 1950 के बाद हिंदी कहानियों में दो विरोधी स्वर सुनाई पड़ते हैं – मूल्यवादी स्वर और विघटित मूल्यों के परिवेश में चीख, त्रास या बदले हुए रिश्तों का स्वर। छठे दशक में ग्रामांचल के साथ–साथ कस्बों और नगरों की कहानियाँ भी लिखी गईं। ग्रामांचल के कहानीकारों में शिवप्रसाद सिंह, मार्कण्डेय और फणीश्वरनाथ रेणु के नाम मुख्य हैं। इसके पहले गाँव अपने परिपार्श्व की पूर्णता में चित्रित नहीं हो पाए थे, किन्तु इन लेखकों ने गाँव के जो चित्र या चरित्र प्रस्तुत किए, वे मूलतः रोमैंटिक थे। मार्कण्डेय जी के कहानी संग्रह हैं – 'आरपार की माला', 'मुर्दा सराय', 'इन्हें भी इन्तजार है' आदि। उनके 'गुलरा के बाबा' और 'हंसा जाई अकेला' में अतीत के प्रति रोमानी दृष्टिकोण दिखाई पड़ता है। रोमैंटिक यथार्थ का सर्वाधिक चटकीला, समग्र और आत्मीयतापूर्ण रंग रेणु की कहानियों में मिलता है। गाँव की धूल–माटी, आंगन की धूप, बैलों की घण्टियाँ, धान की झुकी हुई बालियाँ, गमकता चावल, मेला–ठेला, हँसी–ठिठोली आदि के वर्णन में गाँव ही नहीं, पूरा अंचल अभर आता है। इस दृष्टि से 'लाल पान की बेगम' और 'तीसरी कसम' विशेष रूप से द्रष्टव्य हैं।

साठ के दशक में युगीन संक्रमण और तनाव भी कहानियों में दिखाई देता है। मोहन राकेश तनावों के कहानीकार हैं। मोहन राकेश की कहानियों में 'मलबे का मालिक', 'एक और

जिन्दगी' विशेष कहानियाँ हैं। उनके कहानी संग्रह हैं – नये बादल, जानवर और जानवर, एक और जिन्दगी आदि। राजेन्द्र यादव की कहानियों में आधुनिक भाव बोध को व्यापक सामाजिकता से जोड़ा गया है। उन्होंने निर्वैयक्तिकता पर विशेष बल दिया है। 'जहाँ लक्ष्मी कैद है', 'अभिमन्यु की आत्मकथा', 'छोटे–छोटे ताजमहल', 'किनारे से किनारे तक', 'प्रतीक्षा', 'टूटना और अन्य कहानियाँ', 'अपने पार' आदि उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं। कमलेश्वर की कहानियों में युगीन संक्रमण का मूल्यान्वेषी स्वर मिलता है। उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं – 'देवा की माँ', 'नीली झील', 'खोई हुई दिशाएँ', 'मांस का दरिया', 'यामा द पिट' आदि हैं।

इसी दशक में नरेश मेहता, रघुवीर सहाय, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, धर्मवीर भारती, कुंवर नारायण, रामदरश मिश्र आदि कवियों ने अपने–अपने ढंग से कहानियाँ लिखी हैं। नरेश मेहता की 'तथापि', 'निशाजी' पर काव्यगत रोमानी प्रभाव स्पष्ट परिलक्षित होता है। भारती जी ने 'गुलकी बन्नो', 'सावित्री नं.2' और 'बंद गली का आखिरी मकान' जैसी कहानियाँ रची। लेखिकाओं में मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, शिवानी, उषा प्रियंवदा, रजनी पन्निकर, मेहरुन्निसा परवेज, आदि प्रमुख हैं। इनका संसार कुछ सीमा तक पुरुषों से अलग है। मन्नू भण्डारी के 'मैं हार गई', 'तीन निगाहों की एक तस्वीर' और 'यही सच है' आदि कहानी संग्रह लिखे। कृष्णा सोबती सेक्सजन्य भावुकता को ही उभारकर रह जाती हैं। शिवानी की कहानियों में नारी मनोविज्ञान को आधुनिक नए संदर्भों में देखा गया है। उषा प्रियंवदा आधुनिकता बोध की कथाकार हैं। उनका बोध भी नया और और भाषा भी अपेक्षाकृत संयमित है। 'जिन्दगी और गुलाब के फूल' तथा 'एक कोई दूसरा' उनके कहानी–संग्रह हैं।

सातवें दशक के आरंभ में निर्मल वर्मा की कहानियाँ विशेष चर्चित रहीं। उन्होंने हिंदी कहानी की परंपरा को छोड़कर अपने को पाश्चात्य परंपरा से जोड़ा है। 'परिन्दे' ऐसी ही एक कहानी है। उनकी 'लन्दन की एक रात' और 'कुत्ते की मौत' भी विशिष्ट स्थान रखती है। 70 के दशक में आधुनिकता बोध को लेकर लिखने वालों में रामकुमार, विजय चौहान और राजकमल चौधरी का उल्लेख भी आवश्यक है। सातवें दशक को मोहभंग का दशक कहना उचित होगा। चीन से पराजय के बाद पुरानी पीढ़ी के प्रति क्षोभ–आक्रोश का प्रारंभ यहीं से हुआ। इस दशक की कहानियों में ऊब, विघटन और सतही विद्रोहात्मक रवैया अधिक दिखाई पड़ता है। ज्ञानरंजन, दूधनाथ सिंह, गंगाप्रसाद विमल, गिरिराज किशोर, रवीन्द्र कालिया, महेन्द्र भल्ला, ज्ञानप्रकाश, काशीनाथ सिंह आदि इस दश के अन्य उल्लेखनीय कहानीकार हैं। ज्ञानरंजन की 'फेंस के इधर और उधर', 'पिता', दूधनाथ सिंह की 'रक्तपात', गंगाप्रसाद विमल की 'एक और विदाई', 'प्रश्नचिह्न' ऐसी ही कहानियाँ हैं। गिरिराज किशोर की 'पेपरवेट' संग्रह भी उल्लेखनीय है।

निबंध

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने वैचारिक निबंधों को उत्कर्ष की चरम ऊँचाई पर पहुँचा दिया था। शुक्ल जी के समीक्षात्मक निबंधों की परंपरा की अगली कड़ी के रूप में नन्ददुलारे वाजपेयी का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। जयशंकर प्रसाद 'आधुनिक साहित्य', 'नया साहित्य : नये प्रश्न' आदि संकलित निबंधों में उनकी सूक्ष्म पकड़, संतुलित दृष्टि, गत्यात्मकता और रचनात्मकता

का परिचय मिलता है। इस काल के सबसे महत्त्वपूर्ण निबंधकार हजारीप्रसाद द्विवेदी हैं। उनके ललित निबंधों में सांस्कृतिक विरासत के वर्चस्व के साथ नवीन जीवन–बोध, उत्कट जिजीविषा और नई सामजिक समस्याओं के बीच राह पाने की लालसा सर्वत्र दिखाई देती है। द्विवेदी जी का व्यक्तित्व लचीला और निरन्तर विकासमान है। 'अशोक के फूल' (1948), 'विचार और वितर्क' (1949), 'कल्पलता' (1951), 'विचार–प्रवाह' (1959) और 'कुटज' उनके निबंध संग्रह हैं।

इस काल में जैनेन्द्र का स्थान भी काफी ऊँचा है। उन्होंने अपने निबंधों में दर्शनिक मुद्राओं को अपनाया है। नई अर्थवत्ता के प्रति जागरूक रहने के साथ ही उन्होंने निबंधों में सरसता का भी पूरा ध्यान रखा है। उन्होंने निबंधों में धर्म, राजनीति, संस्कृति, साहित्य, काम, प्रेम, विवाह आदि सभी विषयों पर विचार किया है। 'जड़ की बात', 'साहित्य का श्रेय और प्रेय', 'सोच–विचार', 'मन्थन', 'ये और वे', 'इतस्ततः' आदि उनके निबंध संग्रह हैं। हिंदी में प्रभाववादी समीक्षा के अग्रदूत शान्तिप्रिय द्विवेदी ने समीक्षात्मक निबंधों के अतिरिक्त साहित्येतर विषयों पर भी निबंध लिखे। वे प्रकृति से तरल, आत्मनिष्ठ और भावुक साहित्यकार थे। उनकी तरलता, सहृदयता और अन्तरंगता के दर्शन उनके निबंधों में सर्वत्र होते हैं। 'संचारिणी' (1939), 'युग और साहित्य' (1941), 'सामयिकी' (1944), 'धरातल' (1948), 'प्रतिष्ठान' (1953), 'साकल्य' (1955), 'आधान' (1957), 'वृन्त और विकास' (1959) आदि उनके प्रमुख निबंध संग्रह हैं।

रामधारीसिंह 'दिनकर' भी समय–समय पर महत्त्वपूर्ण निबंध लिखते रहे हैं। 'अर्धनारीश्वर', 'मिट्टी की ओर', 'रेती के फूल', 'हमारी सांस्कृतिक एकता', 'प्रसाद, पन्त और मैथिलीशरण', 'राष्ट्रभाषा और राष्ट्रीय साहित्य' उनके निबंध संग्रह हैं। उनके निबंधों में मानवीय आस्था का प्रतिफलन हुआ है, जिसका मूल आधार या तो मनोवैज्ञानिक है या सांस्कृतिक। समीक्षात्मक निबंधकारों में वैयक्तिकता का सर्वाधिक संस्पर्श डॉ. नगेन्द्र के निबंधों में मिलता है। 'यौवन के द्वार पर' और 'चेतना के बिम्ब' इनके निबंध संग्रह हैं। अज्ञेय अपने निबंधों में अपना अनुभूत लिखते हैं – 'त्रिशंकू', 'आत्मनेपद', और 'हिन्दी–साहित्य : एक आधुनिक परिदृश्य' में संगृहीत निबंधों में अनुभूत का वैचारिक विश्लेषण मिलता है। अज्ञेय ने कुछ निबंध 'कुट्टिचातन' के नाम से भी लिखे हैं। इस नाम से लिखे निबंधों का एक संग्रह 'सब रंग' शीर्षक से प्रकाशित हुआ है। उनके अन्य प्रकाशित निबंध संग्रह हैं – 'आलवाल' (1971), 'भवन्ति' तथा 'लिखि कागद कोरे' (1972)।

साहित्येतर विषयों पर ललित निबंधों की रचना की ओर अनेक लेखक प्रवृत्त हुए हैं। रामवृक्ष बेनीपुरी के निबंध 'गेहूँ और गुलाब' (1950) तथा 'वन्दे वाणी विनायको' (1957) में संगृहीत हैं। 'गेहूँ' भूख का प्रतीक है, तो गुलाब कला और संस्कृति का। श्रीराम शर्मा ने शिकार संबंधी रोचक निबंधों की रचना की है, जिसमें साहसिक वृत्तांतों को ग्रामीण पृष्ठभूमि, प्रकृति और अछूते मानवीय जीवन के मर्मस्पर्शी आयामों में चित्रित किया गया है। देवेन्द्र सत्यार्थी के निबंधों में धरती की सोंधी गन्ध और लोकजीवन की ताजगी मिलती है, जिसका श्रेय उनकी घुमक्कड़ जिन्दगी को है। 'धरती गाती है', 'एक युग : एक प्रतीक' और 'रेखाएँ बोल उठीं' उनके निबंध संग्रह हैं। भदन्त आनन्द कोसल्यायन के निबंधों में भी उनकी घुमक्कड़ प्रवृत्ति के दर्शन होते हैं। वासुदेवशरण अग्रवाल ने जहाँ 'पृथिवी–पुत्र' तथा 'कला और संस्कृति' के निबंधों में भारतीय संस्कृति के विविध

आयामों को उद्घाटित किया है, वहीं यशपाल ने अपने निबंधों में मार्क्सवादी दृष्टिकोण को ग्रहण किया है। 'चक्कर क्लब', 'देखा सोचा समझा', 'बात बात में बात', 'गांधीवाद की शव परीक्षा', 'न्याय का संघर्ष' आदि में उनके शताधिक निबंध संगृहीत हैं।

बनारसीदास चतुर्वेदी के निबंध संग्रहों – 'साहित्य और जीवन', 'हमारे आराध्य' में भी मार्क्सवादी दृष्टिकोण मिलता है। माखनलाल चतुर्वेदी के निबंध 'अमीर इरादे : गरीब इरादे' (1960) में भावुकता का प्राधान्य है। कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर के निबंधों – 'जिन्दगी मुस्कराई', 'बाजे पायलिया के घुंघरू', 'महके आंगन चहके द्वार' आदि में शैली की स्पष्टता अधिक है। भगतवशरण उपाध्याय ने 'ठूंठा आम' और 'सांस्कृतिक निबंध' में इतिहास और संस्कृति की पृष्ठभूमि पर निबंध लिखे हैं। विद्यानिवास मिश्र ने अपने 'चितवन की छांह' (1953), 'तुम चन्दन हम पानी' (1957), 'आंगन का पंछी और बनजारा मन', 'मैंने सिल पहुँचाई', 'मेरे राम का मुकुट भीग रहा है' आदि निबंध संग्रहों में भारतीय साहित्य और संस्कृति को लोकजीवन के साथ जोड़ने का उन्मुक्त प्रयास किया है। धर्मवीर भारती ने हल्के–फुल्के विनोद द्वारा हिपोक्रेसी का पर्दाफाश करते हुए 'ठेले पर हिमालय', 'कहनी–अनकहनी', 'पश्यन्ती' आदि निबंध संग्रह लिखे।

कुबेरनाथ राय हजारीप्रसाद द्विवेदी संस्थान के प्रमुख निबंधकार हैं। उनके निबंध संग्रहों – 'प्रिया नीलकंठी', 'रस आखेटक', 'गन्धमादन' और 'विषाद–योग' में सांस्कृतिक संदर्भों से झांकते जीवन के आधुनिक आयाम स्पष्ट हुए हैं। ललित निबंधों की परंपरा को समृद्ध करने वाले अन्य रचनाकार हैं – विवेकी राय 'फिर बैतलवा डाल पर', लक्ष्मीकान्त 'मैंने कहा', केदारनाथ अग्रवाल 'समय–समय पर', लक्ष्मीचन्द्र जैन 'कागज की किश्तियाँ' आदि।

हास्य–व्यंग्य लेखकों में बेढब बनारसी पहले व्यक्ति हैं जिन्होंने अपने निबंधों द्वारा इस दिशा में पहल की। श्रीनारायण चतुर्वेदी ने भी विनोद शर्मा के छद्म नाम से 'राजभवन की सिगरेटदानी' लिखा। 60 के दशक के प्रमुख व्यंग्यकारों में हरिशंकर परसाई, केशवचन्द्र वर्मा, लक्ष्मीकान्त वर्मा, भीमसेन त्यागी, रवीन्द्रनाथ त्यागी, शरद जोशी, नरेन्द्र कोहली आदि ने भी काफी संख्या में व्यंग्यात्मक निबंधों की सृष्टि की है। इनमें हरिशंकर परसाई प्रमुख हैं। उनके व्यंग्य सामान्यतः मूल्यगत विसंगतियों से संबद्ध होते हैं। 'भूत के पाँव', 'सदाचार का ताबीज' ओर 'निठल्ले की डायरी' उनके प्रसिद्ध व्यंग्य संग्रह हैं।

अन्य गद्य विधाएँ –

जीवनी साहित्य –

आलोच्य युग में जीवनी–साहित्य का बहुमुखी विकास हुआ। लोकप्रिय नेताओं, संत–महात्माओं, साहित्यकारों, विदेशी महापुरुषों, वैज्ञानिकों, खिलाड़ियों, उद्योगपतियों आदि से संबंधित जीवनियाँ प्रचुर मात्रा में लिखी गईं। महात्मा गांधी इस युग में सर्वप्रिय नेता थे अतः उनसे संबंधित जीवनियाँ खूब लिखी गईं। घनश्यामदास बिड़ला 'बापू' (1940), काका कालेलकर 'बापू की झांकियाँ' (1948), सुमंगल प्रकाश 'बापू के कदमों में' (1950), सुशीला नायर, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद तथा जैनेन्द्र कुमार ने बापू पर जीवनियाँ लिखीं। इनके अतिरिक्त भगतसिंह, सुभाषचन्द्र बोस तथा नेहरू से संबंधित जीवनियाँ भी लिखी गईं।

भगतसिंह पर लिखी गई जीवनियों में पहली महत्त्वपूर्ण कृति रतनलाल बंसल की 'सरदार भगतसिंह' (1941) है। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस पर हरिकृष्ण त्रिवेदी ने 'सुभाषचन्द्र बोस' (1941), छविनाथ पाण्डेय ने 'नेताजी सुभाष' (1946), गिरीशचन्द्र जोशी ने 'नेताजी सुभाषचन्द्र बोस' (1946) लिखी। इन कृतियों के माध्यम से सुभाषचन्द्र बोस के निजी जीवन के साथ–साथ नेतृत्व संबंधी गुणों का पता चलता है। चन्द्रशेखर आजाद के क्रांतिकारी जीवन को आधार बनाकर रतनलाल बंसल ने 'अमर शहीद चन्द्रशेखर आजाद' (1946) तथा विश्वनाथ वैशंपायन ने 'चन्द्रशेखर आजाद' (1965) कृतियों की रचना की। वैशंपायन आजाद के अंतरंग मित्र थे और उनके निजी सचिव थे।

भारतीय जन–जीवन में संत महात्मा सदा से पूज्य रहे हैं। अतः उनका उज्ज्वल चरित्र तथा अमूल्य उपदेश इस देश के लोगों में नए उत्साह का संचार करता रहा है। विभिन्न लेखकों ने महात्मा बुद्ध, शंकराचार्य, आदि के जीवन को आधार बनाकर जीवनियाँ लिखीं। इस दृष्टि से भदन्त आनन्द कोशल्यायन ने 'भगवान बुद्ध' (1940), भवानीदयाल संन्यासी ने 'स्वामी शंकरानन्द' (1942), दीनदयाल उपाध्याय ने 'जगद्‌गुरु शंकराचार्य' (1947) नामक जीवनियाँ लिखीं।

इस युग में भारतीय इतिहास से संबद्ध महापुरुषों की जीवनियाँ भी लिखी गईं। इस संदर्भ में शिवाजी के जीवन को आधार बनाकर सर्वाधिक जीवनियाँ लिखी गईं। इनमें लाला लाजपतराय की 'छत्रपति शिवाजी' (1939) तथा भीमसेन विद्यालंकार विरचित 'शिवाजी' (1951) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। सीताराम कोहली विरचित 'रंजीत सिंह' (1931), द्वारकाप्रसाद शर्मा कृत 'भीष्म पितामह' (1940), जीवनलाल प्रेम विरचित 'गुरु गोविन्द सिंह' (1941), चन्द्रबली त्रिपाठी कृत 'धर्मराज युधिष्ठिर' (1951) भी उल्लेखनीय हैं।

विदेशी महापुरुषों पर भी जीवनियाँ लिखी गईं। इनमें राहुल सांकृत्यायन तथा रामवृक्ष बेनीपुरी के नाम उल्लेखनीय हैं। राहुल जी ने 'स्तालिन' (1953), 'कार्ल मार्क्स' (1954) तथा 'माओ–चे–तुंग' (1956) नामक ग्रंथों की रचना की। रामवृक्ष बेनीपुरी ने 'रोजा लुक्जेम्बुर्ग' (1946) तथा 'कार्ल मार्क्स' (1951) नामक जीवनियाँ लिखीं। बनारसीदास द्वारा रचित 'अराजकतावादी लुई माइकेल' (1939), रामइकबाल सिंह द्वारा रचित 'स्टालिन' (1939), लक्ष्मणप्रसाद भारद्वाज विरचित 'इटली का तानाशाह मुसोलिनी' (1940) अन्य उल्लेखनीय कृतियाँ हैं।

साहित्यकारों में प्रेमचंद अत्यधिक लोकप्रिय रहे। प्रेमचंद को आधार बनाकर भी सर्वाधिक जीवनियाँ लिखी गईं। इनके इनकी पत्नी द्वारा 88 उपशीर्षकों के माध्यम से प्रेमचंद पर 'प्रेमचन्द घर में'(1956) नामक जीवनी लिखी, जो बहुत महत्त्वपूर्ण है। उनके पुत्र अमृतराय ने भी 'कलम का सिपाही' (1967) नाम से प्रेमचंद पर जीवनी लिखी। मदनगोपाल ने प्रेमचंद पर 'कलम का मजदूर' (1965) नामक जीवनी लिखी। प्रेमचंद के अतिरिक्त सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' पर कई जीवनियाँ लिखी गईं, जिनमें गंगाप्रसाद पाण्डेय द्वारा लिखित 'महाप्राण निराला' तथा रामविलास शर्मा द्वारा लिखित 'निराला की साहित्य साधना' (1969) विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। शांति जोशी द्वारा लिखित 'सुमित्रानन्दन पंत : जीवन और साहित्य' (1970) विष्णुप्रभाकर विरचित 'आवारा मसीहा' (1974) अन्य उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। 'आवारा मसीहा' बंगला के प्रसिद्ध उपन्यासकार शरतचन्द्र

चट्टोपाध्याय के जीवन पर आधारित हिंदी जीवनी साहित्य की अन्यतम कालजयी कृति है। इनके अतिरिक्त विभिन्न क्षेत्रों के प्रमुख व्यक्तियों पर स्वतंत्र ग्रंथ भी खूब लिखे गए।

आत्मकथा –

इस काल में आत्मकथाएँ प्रचुर मात्रा में लिखी गईं। इस समय लगभग सभी प्रमुख साहित्यकारों ने अपनी आत्मकथा लिखी। श्यामसुन्दरदास, हरिभाऊ उपाध्याय, राहुल सांकृत्यायन, वियोगी हरि, यशपाल, स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, शांतिप्रिय द्विवेदी, देवेन्द्र सत्यार्थी, चतुरसेन शास्त्री, देवराज उपाध्याय, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, सेठ गोविन्ददास, पांडेय बेचन शर्मा 'उग्र', संतराम बी.ए. , भुवनेश्वरप्रसाद मिश्र माधव, हरिवंशराय बच्चन, वृन्दावनलाल वर्मा रामविलास शर्मा आदि कुछ ऐसे हस्ताक्षर हैं जिनकी आत्मकथाओं का प्रकाशन इसी युग में हुआ। श्यामसुन्दरदास ने 'मेरी आत्मकहानी' (1941), हरिभाऊ ने 'साधना के पथ पर' (1946), राहुल सांकृत्यायन जी ने 'मेरी जीवन यात्रा' (पाँच खण्ड) लिखी। सत्यदेव परिव्राजक ने 'स्वतन्त्रता की खोज में' (1951), शांतिप्रिय द्विवेदी ने 'परिव्राजक की प्रजा' (1952), देवेन्द्र सत्यार्थी ने 'चाँद सूरज के वीरन'(1952), 'नील यक्षिणी' (1985) लिखी। सेठ गोविन्ददास ने अपनी आत्मकथा 'आत्म निरीक्षण' (1957), पाण्डेय बेचन शर्मा ने 'अपनी खबर' (1960) लिखी। हरिवंशराय बच्चन ने 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' (1969), 'नीड़ का निर्माण फिर' (1970), 'बसेरे से दूर' (1977) तथा 'दशद्वार से सोपान तक' (1985) शीर्षक से चार खण्डों में आत्मकथा लिखी।

इस कालखण्ड में राजनीतिक–सामाजिक क्षेत्र में काम करने वाले व्यक्तियों की आत्मकथाएँ भी प्रकाशित हुईं, जिनमें राजेन्द्रप्रसाद, भवानीदयाल संन्यासी, गणेशप्रसाद वर्णी, अजितप्रसाद जैन, अलगूराय शास्त्री, जानकीदेवी बजाज, नरदेव शास्त्री, बलदेवराज धवन, पृथ्वीसिंह आजाद, चतुर्भुज शर्मा, सुखदेवराज, मोरारजी देसाई तथा बलराज मधोक के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इस युग में हिंदी के आत्मकथा साहित्य को पत्रकारों, अध्यापकों, वकीलों, फिल्मी कलाकारों, पुलिस कर्मचारियों आदि ने भी समृद्ध किया। प्रायः सभी आत्मकथाकारों ने पारिवारिक जीवन की अपेक्षा अपने कार्यक्षेत्र संबंधी प्रकरणों को प्रमुखता दी है।

यात्रावृत्त –

यही वह युग है जिसमें हमारा देश स्वतन्त्र हुआ। स्वतन्त्रता प्राप्ति के फलस्वरूप भारत के विश्वभर के देशों के साथ राजनयिक एवं सांस्कृतिक संबंध जुड़े। इस कारण भारत के लोगों का विदेशों में खूब आना–जाना रहा। कुछ ने वहाँ रहकर आजीविका के साधनों का लाभ उठाया। प्रगतिवादी आंदोलनों के फलस्वरूप बहुत–से लोगों का ध्यान साम्यवादी देशों की यात्रा की ओर भी गया। इस दृष्टि से स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, कन्हैयालाल मिश्र आर्योपदेशक, सन्तराम, राहुल सांकृत्यायन, सेठ गोविन्ददास, पं. नेहरू, आदि उल्लेखनीय हैं। स्वामी सत्यदेव की 'मेरी पाँचवीं जर्मन यात्रा' (1955) अधिक सजीव नहीं है। कन्हैयालाल की 'मेरी इराक यात्रा' (1940), सन्तराम विरचित 'स्वदेश–विदेश यात्रा' (1940) उल्लेखनीय है।

इस समय रूप से सम्बद्ध यात्रावृत्त अधिक लिखे गए क्योंकि रूस से हमारे संबंध अधिक सुदृढ़ रहे हैं। रूस यात्रा से संबंधित डॉ. सत्यनारायण, (रोमांचक रूस) महेशप्रसाद श्रीवास्तव

(दिल्ली से मास्को), राहुल सांकृत्यायन (रूस में पच्चीस मास), यशपाल जैन (रूस में छियालीस दिन), रामकृष्ण रघुनाथ खडिलकर, बनारसीदास चतुर्वेदी, अक्षयकुमार जैन, डॉ. जगदीशचन्द्र जैन, डॉ. नगेन्द्र (तंत्रालोक से यंत्रालोक तक), लक्ष्मीदेवी चूंडावत (हिन्दुकुश के उस पार) तथा दुर्गावती सिंह (सीधी सादी यादें) ने यात्रावृत्त लिखे। इसी प्रकार लेखकों ने चीन, जापन आदि अन्य देशों से संबंधित कई यात्राओं का वर्णन किया है। 'दिनकर' ने 'देश–विदेश'(1957) तथा 'मेरी यात्राएँ' (1970) में अपने यात्रावृत्तों को संकलित किया है जिनमें कश्मीर, सौराष्ट्र आदि भारतीय प्रदेशों के अतिरिक्त यूरोप–यात्रा के चित्र प्रस्तुत किए हैं।

इसी प्रकार स्वदेश–यात्रा संबंधी यात्रावृत्त भी पर्याप्त संख्या में प्रकाशित हुए हैं। स्वामी प्रणवानन्द तथा स्वामी रामानन्द द्वारा रचित 'कैलाश मानसरोवर' एवं 'कैलाश दर्शन' में हिमालय की पर्वत श्रृंखलाओं का सौन्दर्य साकार हो उठा है। विष्णु प्रभाकर के 'ज्योतिपुंज हिमालय' (1982), राहुल जी के 'किन्नर देश में', 'राहुल यात्रावलि' तथा 'दार्जिलिंग परिचय' यात्रा विषयक कृतियाँ उल्लेखनीय हैं। अज्ञेय ने 'अरे यायावर रहेगा याद' (1953) में असम से लेकर पश्चिमी सीमा प्रान्त तक की गई यात्रा का वर्णन किया है। यात्रावृत्तों को सृजनात्मक उपलब्धि का रूप देने वाली रचनाओं में मोहन राकेश कृत – 'आखिरी चट्टान तक' (1953) का उल्लेखनीय स्थान है। मुनि कांतिसागर द्वारा मूर्तियों की खोज के लिए यात्राएँ कीं जो 'खोज की पगडंडियाँ' (1953) और 'खण्डहरों का वैभव' (1953) में वर्णित है। प्रभाकर द्विवेदी ने 'पार उतरि कहं जइहों' (1958) में स्थानीय बोली का पुट देते हुए गोंडा तथा बस्ती जिले के लोक–जीवन का चित्र अंकित किया है।

विद्यानिधि सिद्धान्तालंकार ने 'शिवालिक की घाटियों में' (1953) शिकारी यात्राओं का कलात्मक वर्णन किया है। काका कालेलकर ने 'हिमालय की यात्रा' (1948) तथा 'सूर्योदय का देश' (1955), कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी ने 'बद्रीनाथ की ओर' (1959) तथा शंकर 'ए पार बांगला ओ पार बांगला' (1982) में भारत की छवि दिखाई है।

संस्मरण तथा रेखाचित्र

इस संबंध में 'हंस' का रेखाचित्र विशेषांक (मार्च, 1939, सम्पादक : श्रीपतराय) सर्वप्रथम उल्लेखनीय है। इन विधाओं के हिंदी लेखकों में बनारसीदास चतुर्वेदी (जन्म 1892) का अन्यतम स्थान है। उन्होंने 'हमारे आराध्य' (1952), और 'संस्मरण' (1953) शीर्षक संस्मरणात्मक रचनाओं तथा 'रेखाचित्र' (1952) एवं 'सेतुबंध' (1952) शीर्षक से रेखाचित्र संग्रहों को प्रस्तुत किया। श्रीराम शर्मा (जन्म 1912) अन्य प्रमुख संस्मरण एवं रेखाचित्रकार हैं। उनके 'प्राणों का सौदा' (1939), 'जंगल के जीव' (1949) और 'वे जीते कैसे हैं' (1957) उल्लेखनीय हैं। रामवृक्ष बेनीपुरी (जन्म 1902) अपने अद्भुत शब्द शिल्प के लिए प्रख्यात हैं। 'लाल तारा' (1938), 'माटी की मूरतें' (1943), 'गेहूँ और गुलाब' (1950) तथा 'मील के पत्थर' (1957) इनकी प्रसिद्ध कृतियाँ हैं।

हिंदी के संस्मरणात्मक रेखाचित्र–साहित्य की श्रीवृद्धि में महादेवी वर्मा ने अत्यधिक महत्त्वपूर्ण योगदान किया है। 'अतीत के चलचित्र' (1941), 'स्मृति की रेखाएँ' (1947), 'पथ के साथी' (1956), 'स्मारिका' (1971) और 'मेरा परिवार' (1972) उनके उल्लेखनीय रेखाचित्र संग्रह हैं।

इन दोनों विधाओं में विशेष योगदान देने के लिए प्रकाशचन्द्र गुप्त भी स्मरणीय हैं। 'पुरानी स्मृतियाँ' (1947) में इनके स्मृतिचित्र संकलित हैं तो 'रेखाचित्र' (1940) में निर्जीव वस्तुओं, स्थानों आदि पर लिखे गए रेखाचित्र प्रसिद्ध हैं। इस युग के अन्य संस्मरण लेखकों में राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह का नाम भी उल्लेखनीय है। उनके 'टूटा तारा' (1940) में संकलित 'मौलवी साहब', 'देवी बाबा' आदि संस्मरण विशेष पठनीय हैं।

विनयमोहन शर्मा (जन्म 1905) का रेखाचित्र संग्रह 'रेखा और रंग' अपनी चुटीली शैली तथा मार्मिक चित्रण के लिए प्रख्यात है। कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर का 'जिन्दगी मुस्काई' (1953) में संकलित 'माटी हो गयी सोना' एवं 'दीप जले शंख बजे'(1959) में संगृहीत रेखाचित्र भी उल्लेखनीय हैं। शिवपूजन सहाय (1893–1962) के संस्मरण तथा रेखाचित्र 'वे दिन वे लोग' (1965) में संकलित हैं। सत्यवती मल्लिक (जन्म 1907) के संस्मरण और रेखाचित्र 'अमिट रेखाएँ' (1951) में संकलित हैं। देवेन्द्र सत्यार्थी (जन्म1907) भावात्मक संस्मरण तथा रेखाचित्र लिखने के लिए प्रसिद्ध हैं। 'रेखाएँ बोल उठीं' (1949) उनका उल्लेखनीय संग्रह है। शांतिप्रिय द्विवेदी (1906–1967) की 'स्मृतियाँ और कृतियाँ' (1966) में उनके कवि हृदय की अभिव्यक्ति मिलती है।

उपेन्द्रनाथ अश्क के भी 'रेखाएँ और चित्र' (1955), 'मंटो मेरा दुश्मन'(1956) और 'ज्यादा अपनी कम परायी' (1959) भी उल्लेखनीय रेखाचित्र हैं। राहुल सांकृत्यायन (1893–1963) का संस्मरण साहित्य 'बचपन की स्मृतियाँ', (1955), 'जिनका मैं कृतज्ञ' (1957), तथा 'मेरे असहयोग के साथी' में संकलित हैं। डॉ. नगेन्द्र 'चेतना के बिम्ब' (1967), जगदीश चन्द्र माथुर 'दस तस्वीरें' तथा 'जिन्होंने जीना जाना' (1971) सेठ गोविन्ददास (जन्म 1893) ने भी 'स्मृति कण' (1959) तथा 'चेहरे जाने पहचाने' (1966) संस्मरण तथा रेखाचित्र लिखे।

संस्मरण साहित्य को अलंकृत करने वाले कवियों में माखनलाल चतुर्वेदी 'समय के पाँव' (1962), रामधारीसिंह दिनकर 'लोकदेव नेहरू' (1965) तथा 'संस्मरण और श्रद्धांजलियाँ' (1969) तथा हरिवंशराय बच्चन 'नये पुराने झरोखे' (1962) उल्लेखनीय हैं।

आलोच्य युग में अन्य लेखकों ने भी मूल्यवान रचनाओं द्वारा हिंदी के संस्मरणात्मक रेखाचित्र–साहित्य को समृद्ध किया है। सत्यजीवन वर्मा 'भारतीय की एलबम' (1949), ओंकार शरद की 'लंका महाराजिन' (1950), कैलाशनाथ काटजू की 'मैं भूल नहीं सकता' (1955), 'प्रेमनारायण टण्डन की 'रेखाचित्र' (1959), इन्द्र विद्यावाचस्पति की 'मैं इनका ऋणी हूँ' (1959), विनोदशंकर व्यास की 'प्रसाद और उनके समकालीन' (1960), संपूर्णानन्द की 'कुछ स्मृतियाँ और स्फुट विचार' (1962), पद्मिनी मेनन की 'चाँद' (1969) परिपूर्णानन्द की 'बीती बातें' (1976), कृष्णा सोबती की 'हम हशमत' (1977) विष्णु प्रभाकर की 'मेरे अग्रज : मेरे मीत' (1983), फणीश्वरनाथ रेणु की 'वन तुलसी की गंध' (1984) अन्य उल्लेख कृतियाँ हैं।

संस्मरण साहित्य की सबसे अनमोल निधि वे पत्र–पत्रिकाएँ हैं जिनमें ये नियमित रूप से प्रकाशित होते रहे हैं। 'सरस्वती' में मनोरंजक संस्मरण, नई धारा में 'मुझे याद है', धर्मयुग में 'एक दिन की बात', 'अविस्मरणीय', 'जब मैं सोलह साल की थी' आदि शीर्षकों के अन्तर्गत अनेक संस्मरण प्रकाशित हुए।

समकालीन हिंदी साहित्य

समकालीन नाटक

1960 के बाद नाटक अन्य विधाओं की अपेक्षाकृत कम ही लिखे गए। नाटक को अभिनय, संगीत, नृत्य तथा अन्य दृश्यकलाओं से समन्वित होना पड़ता है। इस कारण यह जटिल विधा है। वर्तमान समय की गहनतर होती अनुभूतियाँ का प्रस्तुतिकरण तथा तद्नुरूप बड़ी नाट्यमंडलियों के अभाव के कारण यह विधा अपेक्षित वृद्धि नहीं पा सकी। फिर भी पिछले दो दशकों में हिंदी नाटक में नएपन तथा प्रयोगशीलता ने नई नाट्य–भूमि की खोज की है। मोहन राकेश के बाद हिंदी नाटक निराशा और पराजय बोध के संसार से निकला है। उनके बाद अनेक नाटककार नाट्य क्षेत्र में आए जिन्होंने नई टेकनीक, नई रंग सृष्टि और प्रयोगधर्मिता के आधार पर नाट्य सृजन की संभावनाओं को जीवन्त कर दिया। इन नाटककारों ने जीवन की असंगतियों, अन्तर्विरोधों, तनावों, जटिल परिवेशगत स्थितियों को नए रूपतन्त्र के कौशल से नाटकों में अभिव्यक्ति दी। इस दृष्टि से भीष्म साहनी के 'हानुश', 'कबीरा खड़ा बाजार में', सर्वेश्वरदयाल सक्सेना 'बकरी', 'लड़ाई', 'कल भात आयेगा', ज्ञानदेव अग्निहोत्री के 'शतुरमुर्ग', मणिमधुकर के 'रसगन्धर्व', 'लक्ष्मीनारायणलाल के 'मि. अभिमन्यु', 'अब्दुल्ला दीवाना', मुद्राराक्षस के 'मरजीवा', 'तेंदुआ', सुशील कुमार सिंह के 'सिंहासन खाली है', शंकर शेष के 'एक और द्रोणाचार्य', दयाप्रकाश सिन्हा के 'कथा एक कंस की', सुरेन्द्र वर्मा के 'सूर्य की अन्तिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक', 'सेतुबन्ध', 'आठवां सर्ग', मृदुला गर्ग के 'एक और अजनबी' आदि उल्लेखनीय हैं।

सन् साठ के बाद उपजे मोहभंग और संबंधों की अर्थहीनता ने जीवन के पुराने गणित को गलत ठहराया है। इस दृष्टि से जगदीशचन्द्र माथुर ने 'शारदीया' लक्ष्मीनारायण लाल ने 'करफ्यू', 'व्यक्तिगत', 'सगुन पंछी', सुरेन्द्र वर्मा ने 'द्रोपदी', गिरिराज किशोर ने 'नरमेघ', मणिमधुकर ने 'दुलारीबाई', सुशील कुमार सिंह ने 'यार चारों की चार', मुद्राराक्षस ने 'तिलचट्टा', 'योर्स फेथफुली', 'गुफाएँ', 'सन्तोला', विष्णु प्रभाकर ने 'अब और नहीं', रामकुमार भ्रमर ने 'तमाशा', पृथ्वीनाथ शास्त्री ने 'क्रीडनक', शोभना भूटानी ने 'शायद हां' में नई व्यंग्य दृष्टि दी है।

कुछ ऐतिहासिक एवं पौराणिक कथाओं के माध्यम से भारतीयों की अस्मिता को खोज का प्रयास भी किया गया। इनमें शंकर शेष के 'खजुराहो का शिल्पी', दयाप्रकाश का 'इतिहास–चक्र', लक्ष्मीनारायण भारद्वाज का 'अश्वत्थामा', जयशंकर त्रिपाठी का 'कुरुक्षेत्र का सवेरा', लक्ष्मीनारायण लाल का 'राम की लड़ाई', 'नरसिंह कथा', 'एक सत्य हरिश्चन्द्र', गिरिराज किशोर का 'प्रजा ही रहने दो', नरेन्द्र कोहली का 'शंबूक की हत्या', सुरेन्द्र वर्मा का 'छोटे सैयद बड़े सैयद', 'आठवां सर्ग' उल्लेखनीय हैं।

राजनीति की सिद्धान्तहीनता, अवसरवादिता, सरलीकरण और बौद्धिक दिवालियेपन ने आदमी का झकझोर दिया। इसका प्रभाव नाटककारों पर भी पड़ा। राजनीतिक संस्थाओं की मक्कारी को इंगित करते हुए डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल ने 'रक्त कमल', 'चतुर्भुज राक्षस', 'पंचपुरुष', 'गंगा माटी', संतोष कुमार नौटियाल ने 'चाय पार्टियाँ', कणाद ऋषि भटनागर ने 'जहर', 'जनता का

सेवक', ज्ञानदेव अग्निहोत्री ने 'शुतुरमुर्ग', सुशील कुमार सिंह ने 'नागपाश', शरद जोशी ने 'एक था गधा उर्फ अलादाद खां', 'अन्धों का हाथी', शंकर शेष ने 'फंदी', 'बन्धन अपने–अपने', मणिमधुकर ने 'बुलबुल सराय', 'खेला पालमपुर', कुसुम कुमार ने 'रावण', 'ओम क्रान्ति क्रान्ति', 'दिल्ली ऊँचा सुनती है', रमेश उपाध्याय ने 'पेपरवेट' आदि नाटक लिखे।

समकालीन कहानी

सन् 1970 तक पहुँचते–पहुँचते हिंदी कहानी ने साहित्य के अन्य रूपों की तुलना में केंद्रीय स्थान बना लिया है। राजनीतिक, सामाजिक भटकाव की स्थिति में नई पीढ़ी के सृजनात्मक एवं मानसिक स्तर को उन्नत किया है। पुरानी पीढ़ी की मानसिकता के इनके मूल्य एकदम भिन्न है। आठवें दशक के कहानीकारों ने जीवन के विविध, अंतरंग और तनावपूर्ण छवियों के जो चित्र 'यथार्थ' रूप में अंकित किए हैं वो पुरानी पीढ़ी से एकदम अलग है। ये पिछली पीढ़ी की तरह तकलीफों से भागते नहीं हैं, उन्हें काबू में लाकर भोगते हैं। अब इस कहानी का स्वर अस्तित्ववादी न रहकर मानववादी हो गया है।

समकालीन कहानी जिसे नई कहानी भी कहा गया है, में नगरबोध की प्रवृत्ति प्रमुखता से व्यक्त हुई है। आज के नगरीय जीवन में पाई जाने वाली सतही सहानुभूति, आन्तरिक ईर्ष्या, स्वार्थपरता, जीवन की कृत्रिमता आदि की अभिव्यक्ति कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, अमरकान्त की कहानियों में देखी जा सकती है। आधुनिक बोध से उत्पन्न अकेलेपन एवं रिक्तता की अनुभूति, युगीन संक्रमण एवं तनाव को भी उसमें अभिव्यक्त किया गया है। नई कहानी को समृद्ध करने में हिंदी कथा लेखिकाओं का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। उषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, शिवानी, मेहरुन्निसा परवेज एवं रजनी पनिकर जैसी कहानी लेखिकाओं ने पति–पत्नी एवं नारी पुरुष संबंधों को अपनी कहानियों में प्रमुख से अभिव्यक्त किया है। मैं हार गई, त्रिशंकु, तीन निगाहों की एक तस्वीर, यही सच है – आदि मन्नू भण्डारी के कहानी संग्रह हैं।

प्रेम और विवाह के कटु–मधुर संबंधों का चित्रण भी नए कहानीकारों ने किया है। कमलेश्वर की 'बयान', 'राजा निरबंसिया', राजेन्द्र यादव की 'टूटना', 'मन्नू भण्डारी' की 'यही सच है' और मोहन राकेश की 'अपरिचित' कहानियाँ इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। मोहन राकेश की 'मिसपाल', कमलेश्वर की 'तलाश', उषा प्रियंवदा की 'छुट्टी का दिन', अमरकान्त की 'जिन्दगी और जोंक' कहानियाँ टूटी हुई नारी या टूटे हुए पुरुष की कहानियाँ हैं।

नए कहानीकारों में कुछ चर्चित नाम हैं – महीप सिंह, दिनेश पालीवाल, राजकुमार भ्रमर, नरेन्द्र कोहली, गोविन्द मिश्र, श्रद्धा कुमार, ममता कालिया, निरूपमा सोवती, दीप्ति खण्डेलवाल आदि। यद्यपि यह सूची किसी भी सीमा तक और बढ़ सकती है। नई कहानी हिंदी कथा विकास यात्रा की एक उपलब्धि है। नई कहानी में मूल्यहीनता न होकर मूल्यों का परिवर्तन है। नई कहानी किसी एक क्षण या एक स्थिति या एक संवेदना को व्यक्त करने वाली कहानी है। मानव की दृष्टि बदलने के साथ ही नई कहानी का शिल्प भी बदला है।

समकालीन हिंदी साहित्य में कई कहानी आंदोलन भी हुए जिनमें नई कहानी, सचेतन कहानी (महीप सिंह), अचेतन कहानी, साठोत्तरी कहानी, अकहानी (निर्मल वर्मा), समानान्तर कहानी

(कमलेश्वर), समकालीन कहानी (डॉ. गंगा प्रसाद विमल), जनवादी कहानी, सक्रिय कहानी, जन कहानी जादि प्रमुख हैं। कुछ प्रमुख कहानीकार और उनकी प्रमुख कहानियाँ इस प्रकार हैं – मृदुला गर्ग (दुनिया का कायदा, उसका विद्रोह, डेफोडिल जल रहे हैं), मंजुल भगत (सफेद कौआ, मृत्यु की ओर), मणिका मोहिनी (हम बुरे नहीं थे), मार्कण्डेय (हंसा जाई अकेला), राजी सेठ (तीसरी हथेली), ज्ञानरंजन (सम्बन्ध, शेष होते हुए), ओम गोस्वामी (दर्द की मछली), महेन्द्र भल्ला (एक पति के नोट्स, तीन चार दिन), गिरिराज किशोर (पेपर वेट, वल्दरोजी), उदयप्रकाश (तिरिछ, पीली छतरी वाली लड़की, दत्तात्रेय का दुःख, पाल गोमरा का स्कूटर और में प्रार्थना, दरियाई घोड़ा), धीरेन्द्र अस्थाना (उस रात की गन्ध, नींद के बाहर), ममता कालिया (बोलने वाली औरत), नमिता सिंह (राजा का चौक, जंगलगाथा, निकम्मा लड़का, नीलगाय की आँखें), बटरोही (हिडिम्बा के गाँव में), अखिलेश (मुक्ति), अब्दुल बिस्मिल्लाह (रैन बसेरा), सर्वेश्वरदयाल सक्सेना (क्षितिज के पार, बदला हुआ कोण, पराजय का क्षण), सुरेन्द्र वर्मा (प्यार की बातें तथा अन्य कहानियाँ), शिवप्रसाद सिंह (अंधकूप, एक यात्रा सतह के नीचे), रामदरश मिश्र (दिन के साथ), दिनेशनंदिनी डालमिया (तितिक्षा), राजेन्द्र उपाध्याय (ऐश ट्रे), महेन्द्र वशिष्ठ (उसकी कहानी), मालती जोशी (रहिमन धागा प्रेम का) आदि। समय परिवर्तनशील है, भविष्य के गर्भ में अभी और कई रहस्य छिपे हैं, जो समय–समय पर और मुखरित होंगे।

समकालीन उपन्यास

समकालीन दौर का अधिकांश लेखन व्यक्ति–केन्द्रित रहा और रचनाकार व्यक्ति के माध्यम से समय और समाज के हालत हो सामने लाया है। इस प्रवृत्ति का सर्वाधिक मुखर अभिव्यक्ति 'गोबर गणेश', 'किस्सा गुलाम', 'आपका बन्टी' जैसे उपन्यासों में हुआ है। नए उपन्यासकारों में बौद्धिकता है एवं हर विषय को बौद्धिकता की कसौटी पर कसने और निश्चित राय देने की सामर्थ्य दिखाई देती है। आज के उपन्यासों में दैहिक भौतिक संबंधों का बहुत बारीकी से परीक्षण किया गया है। पति–पत्नी के बीच तनाव आ जाने और आपसी संबंधों के टूट जाने की विषयवस्तु भी कई उपन्यासों के केंद्र में रही है। इस काल खण्ड में हिंदी उपन्यासों में नौकरीपेशा मध्यवर्ग के लोगों की शहरी जिंदगी में आ जाने से जागरूक उपन्यासकारों ने आंचलिक उपन्यास खूब लिखे। महानगरीय जीवन की यंत्रणा और खोखलेपन को उभारने वाले उपन्यास भी पर्याप्त मात्रा में लिखे गए। कुल मिलाकर जीवन के फैलाव, सामाजिक–आर्थिक विषमता, राजनीतिक–जीवन की अराजकता, विद्रूपता, मूल्यहीनता, भ्रष्टाचार को लेकर भारी मात्रा में उपन्यास लिखे गए। समकालीन कुछ प्रमुख उपन्यासकार एवं उनके उपन्यास इस प्रकार हैं – मृदुला गर्ग (चित्त कोबरा, उसके हिस्से की धूप, वंशज, अनित्य), निर्मल वर्मा (वे दिन, लाल टीन की छत), श्रीकान्त वर्मा (दूसरी बार), राजकमल चौधरी (मछली मरी हुई), यशपाल (क्यों फँसे ?) गोविन्द मिश्र (वह अपना चेहरा), मनोहरश्याम जोशी (कुरु–कुरु स्वाहा, कसप), कृष्णा सोबती (सूरजमुखी अंधेरे के), भीष्म साहनी (कड़ियाँ), गिरिराज किशोर (चिड़ियाघर), लक्ष्मीकान्त वर्मा (टैराकोटा), श्रीलाल शुक्ल (राग दरबारी), राही मासूम रजा (आधा गाँव, टोपी शुक्ला, हिम्मत जौनपुरी), श्याम व्यास (एक प्यासा तालाब), ओम प्रकाश दीपक (कुछ जिन्दगियाँ बेमतलब), कृष्णा सोबती (सूरजमुखी अंधेरे के, यारों की यार, मित्रो

मरजानी, डार से बिछुड़ी, जिन्दगीनामा, ए लड़की), रमेश शाह (गोबर गणेश), यशपाल (झूठा सच, तेरी मेरी उसकी बात), मणि मधुकर (सफेद मेमने), नरेन्द्र कोहली (दीक्षा), प्रभाकर माचवे (परन्तु, क्षमा, सांचा), देवराज (पथ की खोज, अजय की डायरी, मैं वे और आप, रोड़े का पत्थर, बाहर भीतर), कमलेश्वर (सुबह दोपहर शाम, काली आंधी, तीसरा आदमी, अगामी अतीत, समुद्र में खोया हुआ आदमी), यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' (पथहीन, दिया जला दिया बुझा, गुनाहों की देवी, मैं रानी सुप्यार दे, मरु केसरी), शैलेश मटियानी (बोरीवली से बोरी बन्दर), बदी उज्जमा (एक चूहे की मौत), काशीनाथ सिंह (अपना मोर्चा), रमेश बक्शी (बैसाखियों वाली इमारत), राजकृष्ण मिश्र (काउंसिल हाउस, दारुल शफा, मन्त्रिमण्डल, कुतो मनुष्य), महीप सिंह (अभी शेष हैं), ज्ञान प्रकाश विवेक (गली नम्बर तेरह), ममता कालिया (बेघर, दौड़), शीतांशु भारद्वाज (फिर वही बेखुदी, डॉ. आनन्द, एक और अनेक), तरसेम गुजराल (जलता हुआ गुलाब) आदि।

समकालीन निबंध

आज निबंध परंपरा अधिक एकाग्र और प्रधान विधा के रूप में गतिशील है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल और आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी की निबंध परंपरा का विकास यहाँ अवरुद्ध न होकर नई चिन्तन पद्धतियों को अभिव्यक्ति मिली है। अज्ञेय, विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, निर्मल वर्मा, रमेशचन्द्र शाह, शरद जोशी, जानकीवल्लभ शास्त्री, रामेश्वर शुक्ल 'अंचल', नेमिचन्द्र जैन, विष्णु प्रभाकर, जगदीश चतुर्वेदी, डॉ. देवराज, डॉ. नामवरसिंह, विवेकीराय आदि ने हिंदी निबंध परंपरा को न केवल आगे बढ़ाया बल्कि उसमें कुछ ऐसे विशिष्ट प्रयोग किए जो हिंदी निबंध को नई ऊर्जा प्रदान करते हैं। अज्ञेय जी के निबंधों ने पाठकों का ध्यान सर्वाधिक आकर्षित किया। उनके समीक्षात्मक निबंध बेजोड़ हैं। इनके निबंध संग्रह हैं 'आत्मपरक' (1983), 'केन्द्र और परिधि' (1984), 'सर्जना और सन्दर्भ' (1985), 'स्मृति लेखा' (1982), 'कहाँ है द्वारिका' (1982) आदि। विद्यानिवास मिश्र ने शिक्षा, संस्कृति और साहित्य के क्षेत्र में ललित निबंध लिखे हैं। हिन्दू धर्म : जीवन में सनातन की खोज–भूमिका, परम्परा बन्धन नहीं, मेरे राम का मुकुट भीग रहा है, वसन्त आ गया पर कोई उत्कंठा नहीं, कंटीले तारों के आर–पार, संचारिणी, कौन तू फुलवा बीनन हारी, अस्मिता के लिए, भ्रमरानन्द के पत्र, अंगद की नियति, चितवन की छांह, कदम की फूली डाल, तुम चन्दन हम पानी, आंगन का पंछी और बंजारा मन, मैंने सिल पहुँचाई, साहित्य की चेतना, महाभारत का काव्यार्थ, लागौ रंग हरी तथा अग्निरथ इनके निबंध संग्रह हैं।

समीक्षात्मक निबंधों में अपनी प्रखर बौद्धिकता के क्षेत्र में सबसे प्रबल निबंधकार हैं – गजानन माधव मुक्तिबोध। मुक्तिबोध ने 'नयी कविता का आत्मसंघर्ष', 'नये साहित्य का सौन्दर्यशास्त्र', 'समीक्षा की समस्याएँ' तथा 'एक साहित्यिक की डायरी' नामक निबन्ध संग्रहों से नई समीक्षा को गति दी। नए निबंधकारों में विजयदेवनारायण साही की भूमिका भी उल्लेखनीय हैं। उनके निबंध 'लघुमानव के बहाने हिन्दी कविता पर एक बहस' ने सभी का ध्यान आकृष्ट किया। निर्मल वर्मा जी ने भी हिंदी निबंध को नया रूप–रंग दिया। इन निबंधों में उनकी सृजनात्मक बौद्धिक यात्राओं का एक रोमांत्रक संसार है। इनके निबंध संग्रह हैं – 'शब्द और स्मृति', तथा

'कला का जोखिम'। नेमिचन्द्र जैन ने निर्मल जी से हट कर निबंध लिखे। उनके 'अधूरे साक्षात्कार', 'रंगदर्शन', 'बदलते परिप्रेक्ष्य', तथा 'जनान्तिक' के समीक्षात्मक निबंधों ने एक अलग पहचान बनाई।

रामविलास शर्मा की निबन्ध शैली हिंदी–गद्य में स्वच्छता, प्रखरता और वैचारिकता लिए हुए है। 'विराम चिह्न', 'मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य', 'परम्परा का मूल्यांकन', 'मानव सभ्यता का विकास', 'भाषा युग बोध और कविता', 'कथा–'विवेचना और गद्य शिल्प', 'मार्क्स और पिछड़े हुए समाज' जैसे निबंध संग्रह लिखे। हिंदी व्यंग्य साहित्य भी प्रगति कर रहा है। इस क्षेत्र में कुबेरनाथ राय, विवेकीराय, शरद जोशी, रवीन्द्र कालिया आदि ने हिंदी निबंध की एक समर्थ व्यंग्य–शैली विकसित की है।

युवा निबन्धकारों में प्रभाकर श्रोत्रिय, चन्द्रकान्त वांदिवडेकर, नन्दकिशोर आचार्य, बनवारी कृष्णदत्त पालीवाल, प्रदीप मांडव, कर्ण सिंह चौहान, चंचल चौहान, ज्ञानरंजन, केदारनाथ अग्रवाल, लक्ष्मीचन्द्र, विवेकीराय जैसे बहुत से महत्त्वपूर्ण निबंधकार इस दौर में उभरे हैं। राजनीतिक–सांस्कृतिक विषयों पर चिन्तन की ताजगी से निबंध लिखना इन नए निबंधकारों की विशिष्ट प्रवृत्ति है।

•••

परिशिष्ट

कुछ प्रमुख साहित्यिक विधाओं की परिभाषाएँ एवं स्मरणीय तथ्य –

(क) **छायावाद** – छायावाद का विकास द्विवेदीयुगीन कविता के बाद हुआ। छायावादी काव्य की समय सीमा मोटे रूप से 1918 ई. से 1936 ई. तक मानी जा सकती है।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार – ''छायावाद शब्द का प्रयोग दो अर्थों में समझना चाहिए एक तो रहस्यवाद के अर्थ में, जहाँ उसका संबंध काव्य वस्तु से होता है, अर्थात् जहाँ कवि उस अनन्त और अज्ञात प्रियतम को आलम्बन बनाकर अत्यन्त चित्रमयी भाषा में प्रेम की अनेक प्रकार से व्यंजना करता है।.......छायावाद शब्द का दूसरा प्रयोग काव्य शैली या पद्धति विशेष के व्यापक अर्थ में है।''

जयशंकर प्रसाद के अनुसार – ''जब वेदना के आधार पर स्वानुभूतिमयी अभिव्यक्ति होने लगी तब हिंदी में उसे 'छायावाद' के नाम से अभिहित किया गया। ध्वन्यात्मकता, लाक्षणिकता, सौंदर्यामय प्रतीक विधान तथा उपचार वक्रता के साथ स्वानुभूति की विवृति छायावाद की विशेषताएँ हैं।''

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार –''छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह है। छायावाद एक विशेष प्रकार की भाव पद्धति है, जीवन के प्रति एक विशेष भावात्मक दृष्टिकोण है।''

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार – ''छायावाद के मूल में पाश्चात्य रहस्यवादी भावना अवश्य थी। इस श्रेणी की मूल प्रेरणा अंग्रेजी की रोमांटिक भाव धारा की कविता से प्राप्त हुई थी।''

डॉ. रामविलास शर्मा के शब्दों में – ''छायावाद स्थूल के प्रति सूक्ष्म का विद्रोह नहीं रहा, वरन् थोथी नैतिकता, रूढ़िवाद और सामन्ती साम्राज्यवादी बंधनों के प्रति विद्रोह रहा है।''

(ख) **प्रगतिवाद** – प्रगतिवाद का प्रारंभ सन् 1936 ई. से 1943 ई. तक माना जाता है। प्रगतिवाद के इन कवियों ने साम्यवाद को आधार बनाया।

(ग) **प्रयोगवाद और नई कविता** – प्रयोगवाद का प्रारंभ 1943 ई. में 'अज्ञेय' द्वारा संपादित 'तार–सप्तक' के प्रकाशन से माना जाता है। प्रयोगवादी कवि प्रयोग करने में विश्वास करते हैं। भाषा की दृष्टि से नए प्रयोग, उपमानों की दृष्टि से नए प्रयोग, शिल्प की दृष्टि से नए प्रयोग और काव्य वस्तु की दृष्टि से नए प्रयोग करना। अज्ञेय ने प्रयोग को साध्य नहीं साधन माना है। अज्ञेय के अनुसार –''प्रयोग अपने आप में इष्ट नहीं है, वरन् वह साधन है।

(घ) **नई कविता** – प्रयोगवाद का विकास ही कालान्तर में नई कविता के रूप में हुआ है। डॉ. शिवकुमार शर्मा के अनुसार –''ये दोनों एक ही धारा के विकास की दो अवस्थाएँ हैं। सन् 1943 से 1953 ई. तक कविता में जो नवीन प्रयोग हुए, नई कविता उन्हीं का परिणाम है। प्रयोगवाद उस काव्यधारा की आरम्भिक अवस्था है और नई कविता उसकी विकसित अवस्था।''

(ङ) **समकालीन कविता** – सन् 1960 के बाद की कविता को समकालीन कविता कहा गया। इस युग में कई काव्य धाराएँ परस्पर समानान्तर एक–दूसरे को काटती हुई सी प्रतीत हो रही थी। समकालीन कविता उन्हीं अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देती है जो जीवन की निर्भय वास्तविकताओं से मन में उभरती हैं।

(च) **निबंध** – हिंदी निबंध शब्द पर विचार करते हुए कहा जा सकता है कि निबंध संस्कृत भाषा का शब्द है। निबंध शब्द संस्कृत की धातु नि+बन्ध+ल्युट से बना है, जिसका अर्थ है ऐसी रचना जिसमें विचार बाँधा या गूँथा जाता है।

बेकन के अनुसार – ''निबन्ध विचारों का वह संक्षिप्त विवेचन है जिसमें बुद्धि तत्व की प्रधानता होती है।''

डॉ. गुलाबराय –''निबंध उस गद्य रचना को कहते हैं जिसमें एक सीमित आकार के भीतर किसी विषय का वर्णन या प्रतिपादन एक विशेष निजीपन, स्वच्छन्दता, सौष्ठव और सजीवता साथ ही आवश्यक संगति और सुसंबद्धता के साथ किया गया हो।''

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल – ''आधुनिक पाश्चात्य लक्षणों के अनुसार निबन्ध उसी को कहना चाहिए जिसमें व्यक्तित्व अथवा व्यक्तिगत विशेषता हो।''

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी –''असम्पूर्णता का विचार न करने वाला गद्य रचना का वह प्रकार जिसमें स्वानुभूति की प्रधानता हो, विषय निरूपण में स्वतंत्रता हो, जिसमें लेखक का व्यक्तित्व पूर्ण रूप से प्रतिबिम्बित हो, जिसकी शैली मौलिक तथा साहित्य कोटि की हो, निबंध कहलाएगा।''

(छ) **उपन्यास** – उपन्यास का मूल अर्थ है – निकट रखी वस्तु (उप अर्थात् निकट, न्यास अर्थात् रखी हुई), किन्तु आधुनिक युग में इसका प्रयोग साहित्य के एक ऐसे रूप विशेष के लिए होता है, जिसमें एक दीर्घ कथा का वर्णन गद्य में किया जाता है। आधुनिक युग में उपन्यास शब्द अंग्रेजी के Novel के अर्थ में प्रयुक्त होता है, जिसका अर्थ एक दीर्घ कथात्मक गद्य रचना। उपन्यास वह वृहत् आकार का गद्य आख्यान या वृत्तान्त होता है जिसके अन्तर्गत वास्तविक जीवन के प्रतिनिधित्व का दावा करने वाले पात्रों और कार्यों का चित्रण किया जाता है। गुजराती में 'नवल कथा', मराठी में 'कादम्बरी' एवं बंगला में 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग भी अंग्रेजी के 'नॉवेल' के अर्थ में ही किया जाता है।

(ज) **कहानी** – उपन्यास और कहानी दोनों में ही कथा तत्व विद्‌यमान होता है, अतः प्रारंभ में लोगों की यह धारणा थी कि उपन्यास और कहानी में केवल आकार का ही भेद है, किंतु अब यह धारणा निर्मूल हो चुकी है। वास्तव में कहानी में जीवन के किसी एक अंग या संवेदना की अभिव्यक्ति होती है जबकि उपन्यास में जीवन की समग्रता का अंकन किया जाता है। कहानी की मूल आत्मा 'एक संवेदना या एक प्रभाव' है। ब्लेट्ज हेमिंग्टन के अनुसार –''कम से कम शब्दों में एक विशिष्ट प्रभाव को प्रकट करना ही कहानी है।'' अज्ञेय के अनुसार – ''कहानी एक सूक्ष्मदर्शी यन्त्र है जिसके नीचे मानवीय अस्तित्व के दृश्य खुलते हैं।''

(झ) **नई कहानी** – नए कहानीकारों ने जीवन को यथार्थ रूप में देखने–समझने का प्रयास किया है। नई कहानी भोगे हुए यथार्थ से जुड़ी है, इसलिए वह अधिक प्रामाणिक है। आधुनिक मानव के जीवन को विविध कोणों से देखकर उसका सही परिप्रेक्ष्य में चित्रण करने का प्रयास इन कहानीकारों ने किया है।

डॉ. नामवर सिंह के अनुसार – ''अभी तक जो कहानी सिर्फ कथा कहती थी, या कोई चरित्र पेश करती थी अथवा एक विचार को झटका देती थी, वह जीवन के प्रति एक नया भाव–बोध जगाती है। नई कहानी में विषयों की विविधता के साथ–साथ शिल्प का नयापन भी विद्यमान है। उसमें प्रभावान्विति पर इतना जोर नहीं है जितना जीवन के संश्लिष्ट खण्ड में व्याप्त संवेदना पर है। नया कहानीकार किसी दार्शनिक, सामाजिक अथवा राजनीतिक विचारधारा से प्रतिबद्ध न होकर विशुद्ध अनुभूति की सच्चाई और विषय की यथार्थता के प्रति प्रतिबद्ध होता है।

कमलेश्वर के अनुसार –''पुरानी और नई कहानी के बीच बदलाव का बिन्दु है – 'नई वैचारिक दृष्टि'।''

डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त के अनुसार – ''नई कहानी का सबसे बड़ा वैशिष्ट्य है – कथा तत्व का ह्रास, नया कहानीकार कथानक को महत्त्व नहीं देता।''

मार्कण्डेय के अनुसार – ''नई कहानी से हमारा मतलब उन कहानियों से है जो सच्चे अर्थों में कलात्मक निर्माण हैं, जो जीवन के लिए उपयोगी हैं और महत्त्वपूर्ण होने के साथ ही, उसके किसी–न–किसी नए पहलू पर आधारित हैं।''

(ञ) **सचेतन कहानी** – सन् 1964 के आसपास महीपसिंह द्वारा इसका प्रवर्तन किया गया। सचेतन कहानी में वैचारिकता को विशेष महत्त्व दिया गया।

(ट) **अकहानी** – 1960 के लगभग कुछ ऐसे कथाकार सामने आए जिन्होंने कहानी के स्वीकृत मूल्यों के प्रति निषेध व्यक्त करते हुए अपने स्वतन्त्र अस्तित्व की घोषणा की। निर्मल वर्मा को इस कहानी आंदोलन का प्रवर्तन माना गया।

(ठ) **समानान्तर कहानी** – इस आंदोलन के सूत्रधार कमलेश्वर हैं जिन्होंने 1971 के लगभग समानान्तर कहानी का प्रवर्तन किया। इस प्रकार की कहानियों में निम्नवर्गीय समाज की स्थितियों, विषमताओं एवं समस्याओं का खुलकर चित्रण हुआ। 'सारिका' पत्रिका ने इस प्रकार की कहानियों का एक आंदोलन खड़ा किया।

•••

अभ्यास प्रश्न –

वस्तुनिष्ठ प्रश्न –

1. महावीर प्रसाद द्विवेदी ने सरस्वती पत्रिका का सम्पादन भार कब से सँभाला था ?
   (क) 1900 ई. (ख) 1920 ई. (ग) 1903 ई. (घ) 1910 ई.
2. विवाह मुक्ति एवं पुनर्विवाह की समस्या को प्रसाद जी ने किस नाटक में प्रस्तुत किया ?
   (क)चन्द्रगुप्त (ख) ध्रुवस्वामिनी (ग) स्कन्दगुप्त (घ) विशाख
3. 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' नामक गीत प्रसाद के किस नाटक का है ?
   (क) स्कन्द गुप्त (ख) ध्रुवस्वामिनी (ग) चन्द्रगुप्त (घ) चाणक्य
4. इनमें से कौन–सा उपन्यास सबसे पहले लिखा गया ?
   (क)दिल्ली का दलाल (ख) सेवासदन (ग) ठेठ हिन्दी का ठाठ (घ) चन्द्रकान्ता
5. 'टोपी शुक्ला' किसकी कृति है ?
   (क)राही मासूम रजा (ख) मनोहरश्याम जोशी (ग)धर्मवीर भारती (घ) पाण्डेय बेचन शर्मा
6. जैनेन्द्र का पहला उपन्यास है ?
   (क)सुनीता (ख) त्यागपत्र (ग) परख (घ) कल्याणी
7. 'झूठा सच' का प्रकाशन वर्ष है –
   (क) 1947 ई. (ख) 1957 ई. (ग) 1960 ई. (घ) 1968 ई.
8. 'लखनऊ मेरा लखनऊ' के लेखक इनमें से कौन है ?
   (क)रामदरश मिश्र (ख) अमृतलाल नागर (ग) मनोहरश्याम जोशी (घ) भगवतीचरण वर्मा
9. हिन्दी का सांस्कृतिक उपन्यासकार इनमें से कौन है ?

(क) अज्ञेय (ख) धर्मवीर भारती (ग) हजारी प्रसाद द्विवेदी (घ) जयशंकर प्रसाद

10. 'राई और पर्वत' उपन्यास के लेखक हैं –
(क) निर्मल वर्मा (ख) रांघेय राघव (ग) गिरधर गोपाल (घ) नरेन्द्र कोहली

11. इनमें से कौन–सा उपन्यास इलाचन्द्र जोशी का नहीं है ?
(क)जहाज का पंछी (ख) पर्दे की रानी (ग) व्यतीत (घ) ऋतुचक्र

12. गणेश शंकर विद्यार्थी किस युग के निबंधकार हैं ?
(क) भारतेन्दु युग (ख)द्विवेदी युग (ग) शुक्ल युग (घ) शुक्लोत्तर युग

13. विद्यानिवास मिश्र का निबंध संग्रह 'तुम चन्दन हम पानी' कब प्रकाशित हुआ ?
(क) 1953 ई. (ख)1957 ई. (ग) 1960 ई. (घ) 1965 ई.

14. इतिहास और संस्कृति की पृष्ठभूमि में लिखने वाला निबंधकार इनमें से कौन है ?
(क)भगवतशरण उपाध्याय (ख)रामवृक्ष बेनीपुरी (ग)हजारी प्रसाद द्विवेदी (घ)कुबेरनाथ राय

15. 'चीड़ों पर चाँदनी' के रचनाकार कौन हैं ?
(क) यशपाल (ख) डॉ. रघुवंश (ग) निर्मल वर्मा (घ) डॉ. नगेन्द्र

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. भारतेन्दु के पिता का क्या नाम था ?
2. भारतेन्दु ने कौन–सी पत्रिका निकाली ?
3. 'रामायण महानाटक' के रचयिता कौन हैं ?
4. 'एकान्तवासी योगी' किसकी रचना है ?
5. 'मंगलाप्रसाद पारितोषिक' पुरस्कार किसे प्रदान किया गया ?

लघूत्तरात्मक प्रश्न –

1. भारतेन्दु युग के निबंधकारों के नाम लिखिए।
2. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की रचनाओं के नाम लिखिए।
3. जयशंकर प्रसाद द्वारा रचित नाटकों के नाम लिखिए।
4. छायावादी कवियों के नाम लिखिए।
5. 'प्रथम तार सप्तक' के कवियों के नाम लिखिए।

निबंधात्मक प्रश्न –

1. भारतेन्दु युगीन निबंधकारों का परिचय दीजिए।
2. आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी युग की विशेषताएँ बताइए।
3. छायावादी काव्य एवं काव्यकारों पर एक टिप्पणी लिखिए।
4. प्रगतिवादी काव्य के कवियों का परिचय दीजिए।
5. समकालीन हिंदी कहानी पर सारगर्भित टिप्पणी लिखिए।

•••